CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मरणोत्तर जीवन एवं उसकी सचाई

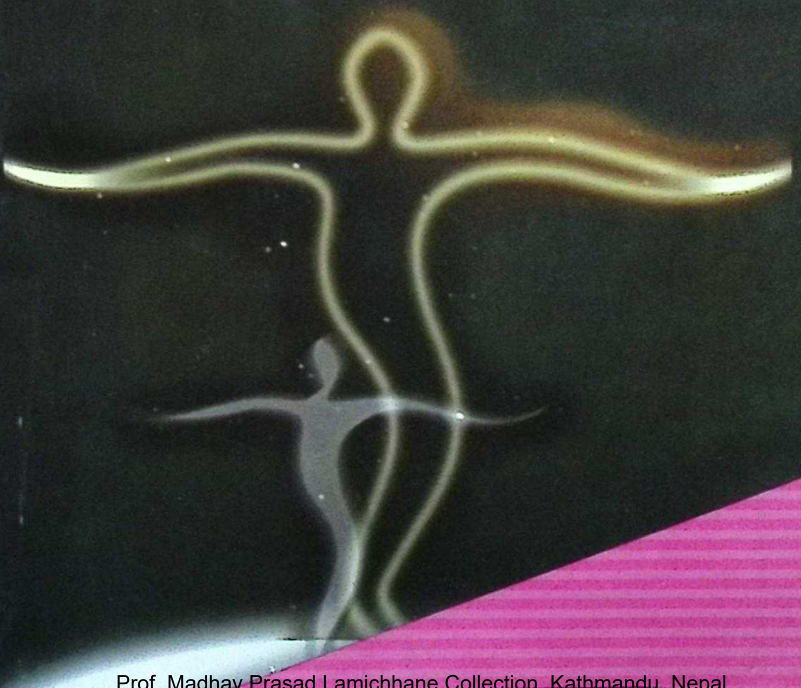

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

श्रीराम शर्मा आचार्य

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मरणोत्तर जीवन एवं उसकी सचाई

*

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
डॉ० प्रणव पंड्या (एम० डी०)

*

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

२०१० मूल्य : १९.०० रुपये

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय-सूची

अध्याय		पृष्ठ संख्या
१.	क्या मृत्यु ही जीवन का अंत है?	३
२.	मरण के उपरांत पुनर्जन्म सुनिश्चित	२७
३.	नियंता की कर्मफल व्यवस्था	५७
४.	पूर्वजन्म के संचित संस्कार, विलक्षण प्रतिभा के उपहार	६७
५.	मरण-सृजन का उल्लास भरा पर्व	८८

***

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्या मृत्यु ही जीवन का अंत है?

घास–पात की तरह मनुष्य भी माता के पेट से जन्म लेता है, पेड़–पौधों की तरह बढ़ता है और पतझड़ के पीले पत्तों की तरह जरा–जीर्ण होकर मौत के मुँह में चला जाता है। देखने में तो मानवी सत्ता का यही आदि–अंत है। प्रत्यक्षवाद की सचाई वहीं तक सीमित है, जहाँ तक इंद्रियों या उपकरणों से किसी पदार्थ को देखा–नापा जा सके। इसलिए पदार्थविज्ञानी जीवन का प्रारंभ व समाप्ति रासायनिक संयोगों एवं वियोगों के साथ जोड़ते हैं और कहते हैं कि मनुष्य एक चलता–फिरता पेड़–पादप भर है। लोक–परलोक उतना ही है जितना कि काया का अस्तित्व। मरण के साथ ही आत्मा अथवा काया सदा–सर्वदा के लिए समाप्त हो जाती है।

बात दार्शनिक प्रतिपादन या वैज्ञानिक विवेचन भर की होती तो उसे भी अन्यान्य उलझनों की तरह पहेली, बुझौवल समझा जा सकता था और समय आने पर उसके सुलझने की प्रतीक्षा की जा सकती थी। किंतु प्रसंग ऐसा है जिसका मानवी दृष्टिकोण और समाज के गठन, विधान और अनुशासन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। यदि जीवन का आदि–अंत–जन्म–मरण तक ही सीमित है, तो फिर इस अवधि में जिस भी प्रकार जितना भी मौज–मजा उड़ाया जा सकता हो, क्यों न उड़ाया जाए? दुष्कृत्यों के फल से यदि चतुरतापूर्वक बचा जा सकता है, तो पीछे कभी उसका दंड भुगतना पड़ेगा, ऐसा क्यों सोचा जाए? अनास्था की इस मनोदशा में पुण्य–परमार्थ का, स्नेह–सहयोग का भी कोई आधार नहीं रह जाता। तब

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

मत्स्य-न्याय अपनाने, जंगल का कानून बरतने और "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की मान्यता का सहज ही बोलबाला होता है। यह जीवन दर्शन मनुष्य को नैतिक अराजकता अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है। समाज के प्रति निष्ठावान रहने की तब कोई आवश्यकता तक प्रतीत नहीं होती।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

चर्चा मृत्यु एवं मरणोत्तर जीवन के संबंध में चल रही है। मृत्यु के संबंध में भिन्न-भिन्न धर्मों की भिन्न-भिन्न धारणाएँ हैं। लेकिन एक विषय में सभी एकमत हैं कि मृत्यु का अर्थ जीवन का अंत नहीं है। इसी आधार पर कुछ धर्मों ने मरने के बाद फिर से जन्म लेने की मान्यता को स्वीकार किया है और कुछ के मतानुसार मृत्यु एक ऐसी घटना है, जिसमें चेतना या प्राण सदा के लिए सो जाते हैं और सृष्टि के अंत में फिर जाग उठते हैं। इस दृष्टि से आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता को अन्यान्य धर्मों ने भी स्वीकार किया है, लेकिन यह सिद्धांत भारतीय दर्शन का तो प्राण ही है।

भारतीय दर्शन के अनुसार पुनर्जन्म की मान्यता के साथ कर्मफल का सघन संबंध है। जिन्हें भले या बुरे कर्मों का परिणाम तत्काल नहीं मिल सका, उन्हें अगले जन्म में कर्मफल भोगना पड़ता है। इस सिद्धांत को स्वीकार करने पर पापफल और दुष्कर्मों के दंड से डरने तथा पुण्यफल के प्रति आश्वस्त रहने की मनःस्थिति बनी रहती है। फलतः पुनर्जन्म के मानने वालों को अपने कर्मों का स्तर सही रखने की आवश्यकता अनुभव होती है और तत्काल फल न मिलने से किसी प्रकार की उद्विग्नता उत्पन्न नहीं होती। पिछले दिनों भौतिक विज्ञान की प्रगति से उत्पन्न हुए उत्साह के कारण यह कहा जाने लगा कि सत्य केवल उतना ही है, जितना कि प्रयोगशाला में सिद्ध हो सके। जो प्रयोगशाला में प्रत्यक्ष नहीं हो सकता, वह सत्य नहीं है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चूँकि चेतन को प्रयोगशाला में प्रत्यक्ष नहीं किया जा सका इसलिए घोषित कर दिया गया कि शरीर ही आत्मा है और मृत्यु के बाद उसका सदा-सर्वदा के लिए अंत हो जाता है। इस घोषणा के अनुसार मनुष्य को चलता-फिरता पौधा भर कहा गया, जो उगता है और सूखकर समाप्त हो जाता है। यह मान्यता मात्र एक सिद्धांत या प्रतिपादन भर बनकर नहीं रह सकती, उसकी प्रतिक्रिया चिंतन और चरित्र पर भी होती है। पुनर्जन्म, कर्मफल, परलोक और पाप-पुण्य की आस्था जिस प्रकार व्यक्ति को दुष्कर्मों से बचाए रहती है, उसी प्रकार शरीर को ही सत्य और आत्मा को मिथ्या मान लिया जाए, तो लगता है कि पाप-पुण्य के पचड़े में पड़ने से क्या लाभ? चतुरता के बल पर जितना भी संभव हो सके, स्वार्थ सिद्ध किया जाना चाहिए।

अब जो प्रमाण सामने आए हैं और उनकी वैज्ञानिक गवेषणाएँ की गई हैं, उनके अनुसार यह भ्रम ढहता जा रहा है कि जीवन-चेतना का अस्तित्व शरीर तक ही सीमित है। इस धारणा में भ्रम तो पहले भी विद्यमान था, पर अब इस सचाई के प्रमाणों पर भी वैज्ञानिक ध्यान देने लगे हैं कि पुनर्जन्म वास्तव में एक ध्रुव सत्य है। पुनर्जन्म के सिद्धांत की पुष्टि करने वाले अनेकानेक प्रमाण आ रहे हैं। भारत में तो इस संबंध में चिरकाल से प्रचलित विश्वास के कारण यह कहा जाता रहा कि पुर्नजन्म की स्मृति बताने वाले यहाँ के वातावरण से प्रभावित रहे होंगे या किसी कल्पना की आधी-अधूरी पुष्टि हो जाने पर यह घोषित किया जाता होगा कि यह बालक पिछले जन्म में अमुक था। यद्यपि इस तरह के प्रकरणों में जिस कठोरता के साथ जाँच-पड़ताल की गई, उससे यह आशंका अपने आप ही निरस्त हो जाती थी। उदाहरण के लिए पिछले जन्म

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के संबंधियों के नाम और रिश्ते बताने, ऐसी घटनाओं का जिक्र करने जिनकी जानकारी दूरस्थ व्यक्तियों को भी नहीं रही, नितांत व्यक्तिगत और पति-पत्नी तक ही सीमित बातों को बता देने, पिछले जन्म में जमीन में गाड़ी गई चीज उखाड़कर देने तथा अपने और पराये खेतों का विवरण बताने जैसे अनेक संदर्भ ऐसे हैं, जिनके आधार पर पुनर्जन्म की प्रामाणिकता से इनकार नहीं किया जा सकता।

पुनर्जन्म सिद्धांत को भली भाँति समझा जाए

किसी भी सिद्धांत को भली भाँति नहीं समझा जाए, तो उसे मानने का दम भरने पर भी आचरण उससे विपरीत ही बना रहता है। पुनर्जन्म सिद्धांत के साथ भी ऐसा ही हुआ है। उसकी वैज्ञानिक प्रक्रिया को न समझने वालों ने जहाँ इस जीवन के भौतिक सुविधा-साधनों को ही पूरी तरह पिछले जन्म के पुण्यफल मान लिया, वहीं इस पुण्य कर्म का अर्थ पूजा-पत्री, कर्मकांड तक ही सीमित माना जाने लगा। परिणाम यह हुआ कि न तो व्यक्ति की आदर्शपरायणता के प्रति कोई वास्तविक सम्मान बचा, न ही पुरुषार्थ की प्रगति का आधार समझा गया। इसके स्थान पर भौतिक सुख-सुविधाएँ अपने पुरुषार्थ की तुलना में कहीं अधिक जुटा पाना या पा जाना ही चारित्रिक सौभाग्य या श्रेष्ठता का प्रमाण माना जाने लगा और वह श्रेष्ठता पाने का आसान तरीका ग्रह-नक्षत्रों, देवताओं को टंट-घंट से प्रसन्न करना समझा गया।

यह एक विचित्र विडंबना ही है कि पुनर्जन्म का जो सिद्धांत पुरुषार्थ और कर्म की महत्ता का प्रतिपादक था, कठिन-से-कठिन अप्रत्याशित विपत्ति को भी प्रारब्ध भोग मानकर धैर्यपूर्वक सहने और आगे उत्कर्ष हेतु पूर्ण विश्वास के साथ प्रयासरत रहने की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रेरणा देता था, वही निष्क्रियता और अंध नियतिवाद का भ्रांत मतवाद बनकर रह गया है।

मनुष्य द्वारा अपने भाग्य का निर्माण आप किए जाने का तथ्य भुलाकर यह माना जाने लगा कि देवता अपनी मरजी और मौज के मुताबिक किसी का भाग्य खराब, किसी का अच्छा लिखते या बनाते हैं। भला यदि ऐसा होने लगे, तो इन देवताओं को शक्ति-संपन्न पागलों के अतिरिक्त और क्या कहा जाएगा? पूजा-पत्री के रूप में मिथ्या या अतिरंजित प्रशंसा तथा अत्यंत सस्ती उपहार-सामग्री पाकर ही अपनी नीति-व्यवस्था को उलट-पलट देने वाले देवता तो अस्त-व्यस्त अफसरों और बाबुओं से भी अधिक भौंदू सिद्ध होते।

प्राय: किसी को धन-सुविधासंपन्न देखकर इसे उसके पिछले जन्मों का पुण्य मान लिया जाता है। पर, धन मनुष्य की अनेक विभूतियों में से एक विभूति है, एकमात्र नहीं। कोई व्यक्ति धनी है, यह यदि उसके किसी विगत पुण्य का फल है, किंतु साथ ही यदि वह दुराचारी है, क्षुद्र है, क्रूर है, व्यसनी है; तो यह सब उसके किसी विगत पाप का फल मानना होगा। यही स्वाभाविक और तर्कसंगत प्रतिपादन कहलाएगा। सामान्यत: लोग जीवन में कुछ सत्कर्म करते हैं, कुछ अनैतिकता भी। सत्कर्म का सुफल किसी सद्‌गुण या समृद्धि के रूप में सामने आएगा, तो दुष्कर्म का प्रभाव दुष्प्रवृत्ति दुर्गुणों के रूप में दीखेगा। धनिकों में से कोई मतिमंद देखे जाते हैं, तो कोई ओछे भी। कोई दुर्व्यसनी-दुराचारी होते हैं, तो कोई धूर्त-प्रवंचक भी। सबके सब धनिक सर्वगुण संपन्न होते हों, ऐसा देखने में नहीं आता। लेकिन उनके दुर्गुणों को पिछले जन्म में उनके पापी होने का प्रमाण तो खुलेआम नहीं कहा जाता, जबकि उनकी धन-

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संपन्नता को उनके पुण्यात्मा होने का चिह्न मानते प्रायः बहुत-से रूढ़ि-पूजकों को देखा जाता है। यह पुनर्जन्म की अधूरी और भ्रांति धारणा हुई।

साधन-सुविधाओं की प्रचुरता उपलब्ध होना न तो किसी के पिछले जन्म में पुण्यात्मा होने का प्रमाण है और न ही किसी के व्यक्तित्व की श्रेष्ठता का परिचायक है। प्रवृत्तियाँ दूषित या पतनशील हुईं, तो परिस्थितियों की यह अनुकूलता और साधनों की प्रचुरता बौद्धिक, नैतिक एवं चारित्रिक पतन में भी सहायक सिद्ध होती है। साधन-संपन्नता से भी बढ़-चढ़कर उत्कृष्ट संवेदना, आदर्शवादी आस्था, सात्त्विकता, प्रसन्नता, धैर्य, साहस, शौर्य, सूझ-बूझ, स्वाध्याय-परायणता, कला-कौशल, व्यवहार-कुशलता, भावनात्मक श्रेष्ठता, करुणा, निरंहकारिता, अंतर्दृष्टि कुशाग्रबुद्धित्व, प्रखर धारणा शक्ति, सहयोग वृत्ति आदि सैकड़ों, हजारों मानवीय विशेषताएँ हैं। इनमें से प्रत्येक का अपना महत्त्व है और उपयोगिता है, प्रत्येक से अनेक प्रकार की उपलब्धियाँ संभव हैं।

इस पर भी इन दिनों किसी भी व्यक्ति की अन्य कोई विशेषता न देखकर, मात्र उसकी आर्थिक-समृद्धि के आधार पर भाग्यवान और पुण्यात्मा मान लिया जाता है अथवा आर्थिक विपन्नता देखकर अभागा और पिछले जन्म के पाप का फल भोगने वाला मान बैठा जाता है। इस प्रवृत्ति को पुनर्जन्म पर आस्था का द्योतक नहीं, चिंतन शक्ति एवं विवेक की दरिद्रता और व्यक्तित्व के उथलेपन का परिचायक मानना ही सही है। इस उथलेपन और बौनेपन के कारण ही भाग्य को बदलने के लिए चमत्कारों का आश्रय खोजने में अनावश्यक समय, श्रम एवं पुरुषार्थ गँवाया जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

पुनर्जन्म की वास्तविक दार्शनिक मान्यता तो इससे भिन्न ही तथ्य एवं निष्कर्ष प्रस्तुत करती है। सफलताएँ-विफलताएँ व्यक्ति के निजी व्यक्तित्व भर से संबंधित नहीं, सामाजिक परिस्थितियाँ और समाज की प्रचलित मान्यताएँ भी इसमें निर्णायक भूमिका निभाती हैं। आदर्शवादी समाज में चरित्रवान का सम्मान होता है, तो भ्रष्ट समाज उसे पिछड़ा मूर्ख समझता है। कभी भारतवर्ष में तपस्वी विद्वानों का लोकमानस पर गहरा प्रभाव होता था। आज आर्थिक संपन्नता अन्य सभी सामर्थ्यों पर हावी है। पैसे वालों को बुद्धिजीवियों-कलाकारों तक का सहयोग सरलता से मिल जाता है। कभी यही कला और विवेक धर्म के लिए समर्पित होता था।

अतः किसी व्यक्ति के पिछले जन्मों की प्रवृत्तियों-संस्कारों का लेखा-जोखा यदि करना ही हो तो ऐसा उसकी वर्तमान प्रवृत्तियों-गतिविधियों के आधार पर किया जाना ही उचित है, न कि सफलता के आधार पर। सफलता की परिभाषाएँ और पैमाने भिन्न-भिन्न होते हैं, किंतु आदर्शवादिता और अवसरवादिता का मापदंड प्रायः सर्वमान्य होता है। स्वार्थ को छलपूर्वक परमार्थ तो प्रचारित किया जा सकता है, परंतु वास्तविकता विदित होने पर सभी एक स्वर से उसे हेय स्वार्थ ही कहेंगे। जबकि सफलता के बारे में ऐसा एकमत नहीं हो सकता। भगतसिंह और चंद्रशेखर आजाद को कुछ लोग क्रांति-चेतना के प्रसार में सफल व्यक्ति मानेंगे, तो कुछ अन्य उस दशा में उन्हें विफल निरूपित करेंगे। किंतु उनका जो भी आदर्श था उसके प्रति वे निष्ठावान थे, यह सभी मानेंगे। इस प्रकार प्रवृत्तियों के मापदंड-सर्वस्वीकृत हैं, जबकि उपलब्धियों के मापदंडों में भिन्नता है। अतः पिछले जन्म के पुण्य-पापों को उपलब्धियों से नहीं, वरन प्रवृत्तियों से आँका जाना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

चेतनसत्ता का अस्तित्व मृत्यु के बाद भी

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मरणोत्तर जीवन का विश्वास ही कर्मफल की पुष्टि करता है। उस मान्यता को जीवित रखकर ही सदाचार और परोपकार की लोकोपयोगी गतिविधियाँ जीवित रखी जा सकती हैं। यह दार्शनिक आवश्यकता नहीं, बल्कि एक सुनिश्चित सचाई भी है, जिसे हर आधार पर सिद्ध किया जा सकता है। इस संदर्भ में फोनोग्राफी, प्रकाश के बल्व के आविष्कर्त्ता टामस एडीसन ने अत्यंत बोधगम्य प्रकाश डालते हुए अपनी पुस्तक 'द अल्टीमेट साइंस' में लिखा है। "प्राणी की सत्ता उच्चस्तरीय विद्युत कण गुच्छकों के रूप में तब भी बनी रहती है, जब वह शरीर से पृथक हो जाती है। मृत्यु के उपरांत यह गुच्छक विधिवत तो नहीं होते, पर वे परस्पर संबद्ध बने रहते हैं। वे बिखरते नहीं, वरन आकाश में जिस प्रकार मधुमक्खी छत्ता छोड़कर विचरती है उस प्रकार विचरते हैं। मधुमक्खियाँ पुराना छत्ता भी एक साथ छोड़ती हैं, नया भी एक साथ बनाती हैं। इसी प्रकार पुनः जीवनचक्र में प्रवेश करते और नया जन्म धारण करते समय उच्चस्तरीय विद्युत कणों के गुच्छक अपने साथ स्थूलशरीर से आस्थाओं, संवेदनाओं का समुच्चय साथ लेकर परिभ्रमण करते रहते हैं।" एक भौतिकविद के परोक्ष जगत संबंधी ये विचार निश्चित ही कोई सनक या भ्रांतियुक्त मान्यता नहीं हैं, अपितु एक सचाई की साक्षी में व्यक्त अभिव्यक्तियाँ हैं। इसी तथ्य को प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक अब्राहम मेस्लोव ने इस प्रकार लिखा है—"भौतिकशास्त्र और जीवशास्त्र के क्षेत्र में आने वाले स्थूलशरीर के अतिरिक्त जीवधारियों का एक सूक्ष्मशरीर भी है, जो अलौकिक क्षमताओं से भरा पड़ा है। यह शरीर मृत्यु के बाद भी बना रहता है।"

अमेरिका में 'क्लिसा क्लाउड चैंबर' द्वारा आत्मा के अस्तित्व संबंधी अनेक प्रयोग किए गए हैं। यह चैंबर एक खोखला पारदर्शी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

सिलेंडर है। इसके भीतर से हवा पूरी तरह निकालकर, भीतर रासायनिक घोल पोत देते हैं। इससे सिलेंडर में एक मंद कुहरा छा जाता है। इस कुहरे से यदि एक भी इलेक्ट्रॉन गुजरे, तो फिट किए गए शक्तिसंपन्न कैमरों द्वारा उनका फोटो ले लिया जाता है। सिलेंडर में होने वाली हर हलचल का चित्र आ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस चैंबर में जीवित चूहों और मेंढकों को रखकर बिजली की धारा प्रवाहित कर उनको प्राणहीन किया गया। देखा गया कि मरने के बाद चूहों या मेंढकों की हूबहू वही अनुकृति उस रासायनिक कुहरे में तैर रही है। उस आकृति की गतिविधियाँ संबंधित प्राणी के जीवनकाल की ही गतिविधियों के अनुरूप थीं। क्रमशः यह सत्ता धुँधली होती चली गई और विलुप्त होकर कैमरे की पकड़ से बाहर हो गई।

परामनोवैज्ञानिक विलियम मैकडूगल ने आत्मा के बारे में अनेक प्रयोग–परीक्षण किए हैं, जिनमें मरणासन्न रोगी का मृत्यु से पूर्व भार लिया गया और मरणोपरांत तौल की गई, तो उस भार में एक औंस अर्थात ३० ग्राम तक की कमी पाई गई। इससे मैकडूगल इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि शरीरस्थ कोई सूक्ष्म तत्त्व ही जीवन का आधार है, जिसके न रहने पर भार में कमी हुई है। संभवतः जानकारी न रहने अथवा मृत्यु को ही मानवी काया की चरम परिणति मानने वालों ने 'ऑकल्ट' की इस खोज को मान्यता न दी हो, फिर भी इससे मरणोत्तर जीवन संबंधी आर्ष मान्यताओं की प्रतिष्ठा कम नहीं होती।

थियोसोफिकल सोसाइटी की जन्मदात्री मैडम ब्लाट्वस्की के बारे में कहा जाता है कि वे अपने को कमरे में बंद करने के उपरांत भी जनता को सूक्ष्मशरीर से दर्शन और उपदेश देती थीं। कर्नल

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

टाउन शेंड के बारे में भी ऐसे ही प्रसंग कहे जाते हैं। पाश्चात्य योग-साधकों में से हैवंटलमान, लिंडर्स, एंड्रयू जैक्सन, डॉ० माल्थस जेल्थ, कारिंगटन, जुरावेल मुलडोन, ऑलिवर लाज, पावर्स, डा० मेस्मर, एलेक्जेंड्रा, डेविड नील, पाल ब्रंटन आदि के अनुभवों और प्रयोगों में सूक्ष्मशरीर की प्रामाणिकता सिद्ध करने वाले अनेक प्रमाण उपस्थित किए गए हैं। जे० मुलडोन अपने स्थूलशरीर से सूक्ष्मशरीर को पृथक करने के कितने प्रदर्शन भी कर चुके थे। इनने इन सबकी चर्चा अपनी पुस्तक 'दि प्रोजेक्शन ऑफ एस्ट्रल बॉडी' में विस्तारपूर्वक की है।

शरीर के न रहने पर भी आत्मा का अस्तित्व बने रहने के बारे में जिन पाश्चात्य दार्शनिकों और तत्त्ववेत्ताओं ने अधिक स्पष्ट समर्थन किया है, उनमें राल्फ वाल्डो ट्राइन, मिडनी फ्लोवर, एला व्हीलर, बिलकाक्स, विलियम वाकर, एटकिंसन, जेम्स केनी आदि का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है। पुराने दार्शनिकों में से कार्लाइल, इमर्सन, कांट, हेगल, थामस, हिलमीन, डायसन आदि का मत भी इसी प्रकार का था। डेस्कार्ट, सोल को पीनियल में अवस्थित मानते थे एवं मृत्यु के बाद उसके नई काया में अवतरित होने की मान्यता के समर्थक थे।

इस संबंध में सामान्य व्यक्तियों की अनुभूतियाँ भी कम विलक्षण नहीं हैं। न्यूयार्क (अमेरिका) की एक दसवर्षीय बालिका डेजा ड्राइडन पेट की खराबी और टाइफाइड की बीमारी से कृशकाय हो गई थी। अपने चारों ओर के भौतिक जगत के अतिरिक्त एक अन्य अलौकिक जगत की बातें करने लगती।

दसवें वर्ष, जिस दिन उसकी मृत्यु हुई, उस दिन उसने अपना चेहरा देखने के लिए दर्पण माँगा। दर्पण में अपना चेहरा देखने के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

बाद वह अपनी माँ से बोली— "मेरी यह देह जर्जर हो गई है। यह उस खूँटी पर टँगी पुरानी पोशाक की तरह हो गई है, जिसे मम्मी तुमने पहनना छोड़ दिया है। मैं भी इस पुरानी देह को उतारकर एली की भाँति दिव्य देह धारण करूँगी।"

"एली कौन है?" माँ के पूछने पर डेजी ने बताया कि यह वही व्यक्ति है, जो हवा में तैरता हुआ–सा आता है और उसे मृत्यु के बारे में बताता है। आज रात तक मैं भी चली जाऊँगी। अगले दिन ठीक ऐसा ही हुआ। ठीक दिन के साढ़े ग्यारह बजे उसने अपनी बाँहें फैलाईं व चिरनिद्रा में सो गई।

गत शताब्दी का विज्ञान आत्मा के अस्तित्व से इनकार करने में जितना कट्टर था, अब उतना नहीं रहा। शरीरशास्त्र के मूर्द्धन्य ज्ञाता अब यह मानने लगे हैं कि मरण थकान की परिणति है। भीतरी जीवनीशक्ति के अत्यधिक असमर्थ हो जाने पर ही मृत्यु के मुख में जाना पड़ता है। इतने पर भी बहुत समय तक शरीर की स्थिति ऐसी बनी रहती है कि यदि उसे समुचित विश्राम देकर थकान मिटाने का उपचार बन पड़े, तो कुछ समय उपरांत मरी हुई काया में फिर जीवन–संचार हो सकता है। गहरी थकान को मिटाने के लिए जिस प्रकार समाधि, निद्रा का उपाय अपनाया जाता है, उसी प्रकार भौतिक विज्ञान में शीत–समाधि का सिद्धांत स्वीकार किया गया है। यदि थोड़ा–सा भी जीवन किसी शरीर में शेष हो, तो उसे हिम–समाधि में लंबे समय तक रखने के उपरांत थकान मिटते ही पुनर्जीवन की आशा की जा सकती है।

दक्षिणी अफ्रीका में जोहान्सवर्ग शहर स्थित विक्टोरिया स्ट्रैंड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आर्थर ब्लेकस्ले ने 'साइकिक रिसर्च' के क्षेत्र में अनेक प्रयोग किए हैं। पिता एडवर्ड माइकेल बर्वे और माँ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कैरोलिन फ्रांसिस एलिज़ाबेथ की संतान जोय वर्गों की जाँच-पड़ताल इन्होंने उस समय शुरू की, जब वह १३ वर्ष की थी और उसकी विचित्रताओं की बात श्री ब्लेकस्ले को विदित हुई।

यह लड़की जोय ढाई वर्ष की आयु से ही अति प्राचीन ऐतिहासिक दृश्यों और वस्तुओं के चित्र बनाने लगी थी। उसकी इस शक्ति का प्रचार तब से अधिक हुआ, जब वह १२ वर्ष की आयु में 'क्रुगर हाउस' नामक भवन देखने गई, जहाँ १५वीं शताब्दी में वहाँ के गणतंत्र का प्रधान ओम पाल रहा करता था। जोय का कहना था कि मैं पाल को जानती थी। उसने पाल के बारे में अनेक बातें बताईं। जोय के इतिहास-प्राध्यापक ने जाँच के बाद उसके द्वारा बताए गए विवरण इतिहास प्रमाणित बताए और कहा कि इससे पूर्व मैं स्वयं यह सब नहीं जानता था। जोय के बताने पर मैंने पुस्तकों और रेकार्ड्स की छान-बीन की, तो पाया कि जोय की जानकारी आश्चर्यजनक रूप से सही थी। जोय ने बताया कि ओम पाल की पहली पत्नी मेरिया डूप्लेसिस १६ वर्ष की उम्र में एक बच्चे को जन्म देते समय मर गई थी। फिर मेरिया की भतीजी से पाल का दूसरा विवाह हुआ और उसके सोलह बच्चे हुए। जोय ने यह भी बताया कि पाल को विद्रोह के बाद देश से निर्वासित कर दिया गया था और वह स्विट्जरलैंड चला गया था, जहाँ १९५० में उसकी मृत्यु हुई। ये सभी बातें छान-बीन से सही निकलीं।

इस विचित्र बालिका जोय का दावा है कि उसे अपने पिछले नौ जन्मों की स्मृति है। इस बालिका के विवरणों में भी एक ही तथ्य अंतर्निहित है कि मनुष्य के विकासक्रम में एक सातत्य है और वह पिछले संस्कारों के साथ नया जीवन प्रारंभ करता है। यह बालिका तब परामनोवैज्ञानिकों के अध्ययन का एक आकर्षक केंद्र बनी हुई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri
थी। अपने इन नवों जीवन के बारे में १२-१३ वर्ष की आयु में जोय ने ऐसे विस्तृत विवरण पेश किए, जो मात्र अध्ययन के आधार पर शीर्षस्थ इतिहास पुरातत्त्ववेत्ता ही बता सकते हैं। यह चमत्कार दूरानुभूति का परिणाम भी नहीं माना जा सकता। क्योंकि दूरानुभूति की सामर्थ्य से व्यक्ति उन्हीं बातों को जान सकता है, जो प्रश्नकर्त्ता के मन-मस्तिष्क में हैं। किंतु जोय तो बिना किसी प्रश्नकर्त्ता के अनेक ब्यौरे सुनाती-बताती थी, जिसकी जानकारी खुद श्रोताओं को नहीं होती।

जोय के अनुसार बहुत पहले के एक जन्म की उसे इतनी ही याद है कि डायनासौर यानी प्राचीन भीमकाय पशु ने उसका एक बार पीछा किया था। यह पाषाणकाल की घटना है। दूसरे जन्म में जोय दासी थी। उसके स्वामी ने अप्रसन्न होकर उसका सिर काट दिया था। तीसरे जन्म में भी वह दासी के रूप में रही। चौथे जन्म में वह तत्कालीन रोम में एक जगह रहती थी और रेशमी कंबल एवं वस्त्र बनाती थी। पाँचवे जन्म में वह एक धर्मांध महिला थी और एक धर्मोपदेशक को उसने पत्थर दे मारा। जोय का छठवाँ जन्म इटली में नवजागरण के काल खंड में हुआ। उस समय वहाँ कला और साहित्य की नई जाग्रति उभार पर थी। जोय के घर में दीवारों और छतों पर बड़े-बड़े चित्र थे। सातवाँ जन्म गुडहोप के अंतरीप में १७वीं शताब्दी में हुआ। जहाँ पर वह ठिगने पीले रंग के लोगों में से थी। राज्याश्रय में पलने वाले व्यवसाय से उसका सदा संबंध रहा।

आठवें जन्म में वह अधिक विकसित रूप में पैदा हुई। १९वीं शताब्दी की यह बात है। सन् १८८३ से सन् १९०० तक वह ट्रांसवाल गणतंत्र के राष्ट्रपति ओम पाल के निवास-भवन आती-जाती थी। कला और कारीगरों में उसकी गहरी रुचि थी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नवें जीवन में यह प्रिटोरिया नगर की एक छात्रा थी। वह पिछले जन्मों के बारे में विस्तृत ब्योरे बताती है। उसकी कलारुचि प्रत्येक जन्म में अक्षुण्ण रही है। दासी के रूप में वह नाचती थी। रोम में रेशमी कंबल बुनती थी। धर्मक्षेत्र से भी वह सदा हर जन्म में संबंधित रही। उसके संस्कारों में निरंतर एक धारावाहिकता देखी जा सकती है।

संस्कारों का यह प्रवाह ही पुनर्जन्म सिद्धांत का आधार है। भाव-संवेदनाएँ, आस्थाएँ, चिंतन की दशाएँ और स्वभाव ही अगले जन्म में संस्कार रूप में साथ रहते हैं। साधन-सामग्रियाँ नहीं। साधनों की उपयोगिता भी प्रवृत्ति के अनुरूप घटती-बढ़ती रहती है। बुद्धि के विकास में उनका राजसी ऐश्वर्य कोई सहायता नहीं कर सका। अयोध्या की साधन-सुविधाएँ राम को रावण विजय में रंचमात्र सहयोग न दे सकीं। जिसके कारण राम या बुद्ध की गरिमा है, जो उनके व्यक्तित्व की वास्तविक विशेषताएँ कही-समझी जाती हैं, उनका निर्माण उन सुविधाओं के द्वारा नहीं हुआ था, जो उन्हें जन्म से प्राप्त थीं। अपितु उन सत्प्रवृत्तियों के द्वारा हुआ था, जो उनके समग्र व्यक्तित्व के मूल में क्रियाशील रहीं। ये प्रवृत्तियाँ ही अपने अनुरूप साधन जुटाने का समर्थ आधार बन जाती हैं। व्यक्तित्व में ये विशेषताएँ न हुईं तो साधनों-सुविधाओं का विशाल-भंडार खाली होते देर नहीं लगती।

प्रमाण-ही-प्रमाण, अनेकों प्रमाण

आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता का सिद्धांत भारतीय दर्शन का तो प्राण है ही, अन्यान्य धर्मों एवं दर्शनों ने भी उसे किसी-न-किसी रूप में स्वीकार किया है। ईसाई, मुसलमान धर्मों में पुनर्जन्म की तो मान्यता नहीं है, पर उनके यहाँ भी आत्मा का अस्तित्व मरने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

के बाद भी बने रहने और न्याय के दिन ईश्वर के सम्मुख उपस्थित होने की बात है। इसका अर्थ कम–से–कम इतना तो है ही कि मरने के साथ–साथ ही जीव की सत्ता सदा–सर्वदा के लिए समाप्त नहीं हो जाती, वरन फिर से सचेतन की तरह काम करने का अवसर मिलता है। स्वर्ग–नरक की मान्यताएँ भी इसी सिद्धांत की पुष्टि करती हैं कि अशरीरी आत्मा को भी एक विशेष प्रकार का जीवनयापन करने का अवसर मिलता है।

भूत–प्रेतों का अस्तित्व पिछड़े लोगों में अंधविश्वास की तरह फैला हुआ है। प्रगतिशील लोग उस बात का मजाक बनाते हैं, पर दोनों की मध्यवर्ती भी एक स्थिति है, जिसमें कठोर परीक्षणों की कसौटी पर भी मृतात्माओं के द्वारा शरीरधारियों जैसे आचरण होने के प्रमाण मिलते हैं। प्रेत कैसे होते हैं? क्या करते हैं? मनुष्यों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करते हैं, क्या चाहते हैं? इन प्रश्नों पर मतभेद हो सकता है, पर यह तथ्य अब दिनोंदिन अधिक प्रामाणिक होता जा रहा है, जिसमें किन्हीं आत्माओं को मरने के उपरांत भी अपनी हलचलें प्रत्यक्ष करने की बात विश्वासपूर्वक स्वीकार की जा सके।

आत्मा की अमरता का एक प्रमाण पुनर्जन्म है। मरने के बाद दूसरा जन्म मिलने का तथ्य हिंदू धर्म में सदा से माना जाता रहा है। पुराणों में इसका पग–पग पर वर्णन है। धर्मशास्त्रों के अगणित आप्त वचनों में आत्मा के पुनर्जन्म लेने की बात कही गई है। चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने के उपरांत मनुष्य जन्म मिलने, पुण्य और पाप का फल भोगने के लिए फिर से जन्म मिलने की बात को धर्मग्रंथों में अनेकानेक उदाहरणों के साथ समझाया गया है।

भारत में पुनर्जन्म के संबंध में चिर मान्यता होने के कारण यह भी कहा जा सकता है कि पुनर्जन्म की स्मृति बताने वाले, यहाँ के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वातावरण से प्रभावित रहे होंगे। या किसी कल्पना की आधी–अधूरी पुष्टि हो जाने पर यह घोषित किया जाता होगा कि यह बालक पिछले जन्म में अमुक था। यों इस आशंका को भी कठोर परीक्षा की दृष्टि से भली भाँति निरस्त किया जाता रहा है और बच्चे ऐसे प्रमाण देते रहे हैं, जिनके कारण किसी झाँसेपट्टी की आशंका नहीं रह जाती। पिछले जन्म के संबंधियों के नाम तथा रिश्ते बताने लगने—ऐसी घटनाओं का जिक्र करना जिनकी दूरस्थ व्यक्तियों को जानकारी नहीं हो सकती, वस्तुओं के साथ जुड़े हुए इतिहास का विवरण बताना, जमीन में गड़ी चीजें उखाड़कर देना अपने और पराये खेतों का विवरण बताना जैसे अनेक संदर्भ ऐसे हैं, जिनके आधार पर पुनर्जन्म होने की प्रामाणिकता से इनकार नहीं किया जा सकता। फिर भारत से बाहर उन संप्रदाय के लोगों पर तो पूर्व मान्यता का भी आक्षेप नहीं लगाया जा सकता। पुनर्जन्म के प्रमाण तो वहाँ भी मिलते हैं। यह भी किंवदंतियों के आधार पर नहीं, वरन परामनोविज्ञान की शोधकर्त्ता मंडली द्वारा उनकी छान–बीन की गई है और यह पाया गया है कि ये घटनाएँ मनगढ़ंत, कपोल–कल्पित या धोखाधड़ी नहीं हैं। इनसे पुनर्जन्म की मान्यता की ही पुष्टि होती है।

भारत के बाहर इस तरह की घटनाओं पर अब गंभीरतापूर्वक ध्यान दिया जा रहा है और उनका वैज्ञानिक विश्लेषण किया जा रहा है। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम व्यवस्थित और वैज्ञानिक ढंग से गवेषणा करने वालों में प्रसिद्ध परामनोवैज्ञानिक डॉ० इवान स्टीवेंसन का नाम लिया जाता है। यूनिवर्सिटी ऑफ वर्जीनिया मेडिकल सेंटर के मनोचिकित्सा विभाग में कार्यरत डॉ० स्टीवेंसन ने पुनर्जन्म की वास्तविकता को वैज्ञानिक ढंग से परखने का सिलसिला शुरू किया। सन् १९६६ ई० में इस विषय पर उनकी पहली पुस्तक 'ट्वेंटी कॉजेस

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
सजेस्टिव ऑफ रीइन्कार्नेशन" प्रकाशित हुई। इस पुस्तक के बाद उनकी तीन पुस्तकें और प्रकाशित हुईं, जिनमें पुनर्जन्म की कई प्रामाणिक घटनाओं का विवरण देते हुए इस विषय का प्रतिपादन किया गया था।

ये तीनों पुस्तकें अलग-अलग देशों में घटी घटनाओं के आधार पर लिखी गई हैं। एक में भारत में जन्मे व्यक्तियों का विवरण है जिन्हें अपने पिछले जन्मों की याद रही। दूसरी में श्रीलंका और तीसरी पुस्तक में तुर्की की घटनाओं का विवरण है। इन तीनों पुस्तकों में कुल मिलाकर १३०० घटनाओं का वर्णन है, जिनकी वास्तविकता और प्रामाणिकता असंदिग्ध बताई गई है।

लेबनान और तुर्की के मुस्लिम परिवारों में भी पुनर्जन्म की अनेक स्मृतियाँ सामने आईं हैं। जिन्हें स्वयं शोधकर्ताओं ने सही पाया है। लेबनान के एक गाँव कोरनाइल में एक मुस्लिम परिवार में एक बालक जन्मा, जिसका नाम अहमद था। बच्चा दो वर्ष की उम्र से ही पूर्वजन्म की घटनाओं और संबंधियों के बारे में बुदबुदाया करता था, किंतु किसी ने ध्यान नहीं दिया। बड़ा होने पर अपना पूर्व जन्म का निवास खेरबी और नाम बोहमजी बताने लगा फिर भी उस पर किसी ने विश्वास नहीं किया । एक दिन उसने सड़क पर खेरबी के एक आदमी को पहचान लिया।

पता लगने पर पुनर्जन्म के शोधकर्ता वहाँ पहुँचे और उस बालक को ४० किमी० दूर गाँव खेरबी ले गए। बालक ने अपने पूर्वजन्म के नाम इब्राहिम बोहमजी के बारे में जितना बताया था, वह सही निकलता गया। उसकी मृत्यु रीढ़ की हड्डी के क्षयरोग से हुई। उसके पैर उस समय अशक्त थे। इस जन्म में ठीक तरह से चलने पर वह बड़े उत्साह और हर्ष के साथ इस बात को दूसरों के सामने प्रकट करता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

खेरबी में उसने कुटुंबियों, संबंधियों, मित्र, परिचितों आदि को पहचान लिया। ऐसी घटनाएँ सुनाईं, जो केवल संबंधित लोग ही जानते थे। उसने अपनी प्रेयसी का नाम भी बताया। मित्र की ट्रक दुर्घटना से मरने की बात कही। मरे हुए भाई दाऊद का चित्र पहचाना। अपनी बहन हुडा को भी पहचान लिया।

इस्तंबूल (तुर्की) के विज्ञान अनुसंधान परिषद ने पुनर्जन्म की इस घटना की जाँच कर उसे सत्य पाया है। एक चार वर्ष का बालक इस्माइल अतलिंट्रालिक पूर्वजन्म में दक्षिण-पूर्वी तुर्की के अदना नामक गाँव का आबिद सुजुलयुस था। उसकी हत्या की गई। वह अपने पीछे तीन बच्चे गुलशराँ, जैकी और हिकमन छोड़ आया था। वह चार साल का बालक इस्माइल रोते-रोते पूर्वजन्म के अपने बच्चों को पुकारने लगता तथा उनकी स्मृति में रोता भी था।

एक दिन उसी इस्माइल ने एक फेरी वाले को आइसक्रीम बेचते देखा। उसने उस अजनबी का नाम महमूद लेकर पुकारा और उससे कहा कि 'तुम तो शाक-सब्जी बेचते थे, आइसक्रीम कब से बेचने लगे? महमूद चकरा उठा। पर यह कहकर तो उसने उसके आश्चर्य को कई गुना अधिक बढ़ा दिया कि तुम भूल रहे हो, भाई! मैं तुम्हारा चिर-परिचित आबिद हूँ जिसकी छह वर्ष पूर्व हत्या की गई थी।

पत्र-प्रतिनिधि इस्माइल को अदना नगर ले गए। वहाँ पहुँचते ही उसने अपने पूर्वजन्म की बेटी गुलशराँ को पहचान लिया। वह वहाँ भी पहुँचा, जहाँ अस्तबल में रमजान ने उसकी कुल्हाड़ी से हत्या की थी। उस कब्र पर भी गया, जहाँ उसे दफनाया गया था। पुलिस से पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि उपर्युक्त हत्याकांड हुआ था। हत्यारे रमजान को फाँसी का दंड भी दिया था। आबिद की कब्र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वही थी, जो इस्माइल ने बताई। बालक इस्माइल का चाचा जब उसके साथ क्रूर व्यवहार करने लगा, तो उसने कहा कि 'तुम भूल गए, मेरे ही बाग में तुम काम करते थे और बहुत समय तक तुम्हें मैंने ही रोटी खिलाई थी।' जानकारी प्राप्त करने पर यह पाया गया कि आबिद के इस व्यक्ति पर, जो अब इस्माइल का चाचा था, अनेकों एहसान थे। इस घटना ने कभी मुस्लिम समुदाय में क्रांति मचा दी थी। ऐसे-ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण मिलने पर भी मरणोत्तर जीवन को नकारना हठधर्मिता ही कहा जाएगा।

भारत में हाल ही में एक पुस्तक प्रकाशित हुई 'लिविंग एंड डाइंग।' इस पुस्तक में ३ सितंबर १९६९ को उत्तर प्रदेश के एक ब्राह्मण परिवार में जन्मी कन्या का उल्लेख है। लड़की का नाम स्वर्णलता रखा गया। जब वह साढ़े तीन वर्ष की हुई, तो उसके घर उसके पिता से मिलने के लिए कुछ सफाई करने वाले जमादार आए। उन्हें देखकर स्वर्णलता सूअर का गोश्त खाने की जिद करने लगी। ब्राह्मण परिवार में गोश्त-अंडे की बात तो दूर रही, चींटी भी नहीं मारी जाती। फिर लता ने यह कहाँ सुना और सीखा? पिता जब उसे टालने और डपटने लगे, तो स्वर्णलता ने बताया कि वह भी सफाई जमादारों की जाति की ही थी। उसने यह भी बताया कि उसका पूर्वजन्म का नाम शांति था और उसके पति का नाम राजिंदर था। उसने अपने पिछले जन्म के निवास ग्राम और घर का पता बताया, जो वर्तमान निवास से कुल दो किलोमीटर दूर ही था। उसकी मृत्यु किस प्रकार हुई? यह पूछे जाने पर स्वर्णलता ने बताया कि वह रोज पास ही रेलवे लाइन पर कोयले बीनने के लिए जाया करती थी। जिस दिन उसकी मृत्यु हुई वह रामनवमी का दिन था। उस दिन किसी बात पर पति से तकरार हो गई और उसके पति ने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शांति को झाड़ू की मूँठ से पीटा। इससे वह बेहद दुखी हुई। उसी दिन जब वह रेल की पटरी पर कोयले बीनने गई, तो रेल के नीचे कुचलकर मर गई। स्वर्णलता ने अपने पुराने परिवार और विशेषत: अपने बेटी जिसका नाम गीता था और जो अविवाहित थी, देखने की हार्दिक इच्छा व्यक्त की।

स्वर्णलता ने जो भी बातें बताईं थीं उन सारी बातों की छान-बीन प्रसिद्ध परामनोविज्ञानवेत्ताओं द्वारा की गई, जो ऐसे मामलों की पहले भी कई बार जाँच कर चुके थे, इन विशेषज्ञों ने जिन मामलों की पहले जाँच की थी, उनका नीर-क्षीर विश्लेषण कर सच-झूठ को निष्पक्ष ढंग से प्रतिपादित किया गया। इसलिए उनके निष्कर्षों पर जरा भी संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं थी। अनुसंधान करने वाले परामनोविज्ञानवेत्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि स्वर्णलता ने जो कुछ भी बताया था, वह अक्षरश: सच था। उन्होंने यह भी पाया कि पिछले जन्म के संस्कार उसके इस जन्म में भी विद्यमान थे। उन्होंने यह भी पाया कि अपनी पिछली जाति के अनुसार ही उसकी व्यक्तिगत आदतें भी थीं। वह घर के दूसरे बच्चों से अलग-अलग ही रहती और यह कहकर उसने स्कूल जाने से भी इनकार कर दिया कि वह तो नीची जाति की है। इसके साथ ही वह रेलगाड़ियों से भी बहुत डरती थी। सन् १९७५ में उससे अनुसंधानकर्त्ताओं ने आखिरी बार मुलाकात की। इस समय भी उसे अपने पिछले जन्म का स्मरण था, पर तब वह पहले की तरह बातें नहीं करती थी, क्योंकि वर्तमान जीवन के संस्कार प्रबल होने लगे थे।

जून १९६५ में जन्मी पुष्पा नाम की लड़की (सिरसा) डेढ़ वर्ष की हुई, तभी से एक घर की ओर इशारा करने लगी, जिसे बाद में उसने अपने पिछले जन्म का घर बताया। बोलने योग्य होते ही उसने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने आप को एक सिख परिवार की बहू बताया और अपने बच्चों के नाम भी बताने लगी, वह अपने पिछले जन्म का नाम मनजीत कौर बताती थी। यह पूछने पर कि उसकी मृत्यु किस प्रकार हुई? मनजीत कौर (पुष्पा) ने भयभीत होकर कहा कि उसकी सास उसके पति को उलटी-सीधी पढ़ाती रहती थी और उसके विरुद्ध कान भरती रहती थी। एक दिन तो उसका पति इस तरह भड़क उठा कि उसने मनजीत को चाकू से मार ही डाला। जब इन बातों की पुष्टि के लिए पुनर्जन्म में रुचि रखने वाले व्यक्तियों ने छान-बीन की, तो इस तथ्य को बिलकुल सही पाया गया कि मनजीत कौर की पुष्पा के जन्म से ठीक चार वर्ष पहले हत्या कर दी गई थी।

अमेरिका के कोलोराडीप्यूएली नामक नगर में रूथ सीमेन्स नामक लड़की ने अपने पूर्वजन्म की घटनाओं को बताकर ईसाई धर्म के उन अनुयायियों को असमंजस में डाल दिया, जो पुनर्जन्म के सिद्धांत को नहीं मानते हैं। इस लड़की को मोरेबर्न-स्टाइन नामक आत्मविशारद ने प्रयोग द्वारा उसी के पूर्वजन्म की अनेक घटनाओं का पता लगाया। प्रयोग के दौरान उसने बताया कि वह सौ वर्ष पूर्व आयरलैंड के यार्क नगर में हुई थी। उसका नाम ब्राइडीमर्फी था और उसके पति का नाम मेकार्थी था। रूथ सीमेन्स ने अपने विगत जन्म के बारे में भी बातें बताईं, उनकी जाँच की गई तो वे अक्षरशः सत्य पाई गईं। डॉ० रैना रूथ ने इस संबंध में अनेकों प्रमाण अपनी पुस्तक 'री-इन्कार्नेशन एंड साइंस' में दिए हैं।

विलियम वाकर एवं केन्सन ने अपनी पुस्तक "री-इन्कार्नेशन" में ऐसी अनेक घटनाओं का विवरण दिया है। जिनमें पुनर्जन्म में विश्वास न करने वाले परिवारों में जन्मे बच्चों को भी पूर्वजन्म की स्मृतियाँ थीं। बच्चों द्वारा प्रस्तुत किए गए विवरणों से इस सिद्धांत की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुष्टि ही होती है। बड़ी आयु हो जाने पर यदि ऐसी स्मृतियाँ नहीं रहतीं या धुँधली पड़ जाती हैं, पर बचपन में बहुतों को ऐसे स्मरण बने रहते हैं, जिनके आधार पर उनके पूर्वजन्म के संबंध में काफी जानकारी मिलती है। मोटे रूप में जीवात्मा के योनि-परिभ्रमण का यह अर्थ समझा जाता है कि वह छोटे-बड़े कृमि-कीटकों, पशु-पक्षियों की चौरासी लाख योनियों में जन्म लेने के बाद ही मनुष्य जन्म प्राप्त करता है। पुनर्जन्म की इन घटनाओं से यह सिद्ध होता है कि मनुष्य को दूसरा जन्म मनुष्य के रूप में ही मिलता है। इसके पीछे तर्क भी है। जीव की चेतना का इतना अधिक विकास-विस्तार हो चुका होता है कि उतने फैलाव को निम्न प्राणियों के मस्तिष्क में समेटा नहीं जा सकता। बड़ी आयु का मनुष्य जिस प्रकार अपने बचपन के कपड़े पहनकर काम नहीं चला सकता, उसी प्रकार मनुष्य योनि में जन्म लेने के बाद छोटी योनियों में प्रवेश करने से गुजारा नहीं चलता।

रही बात बुरे कर्मों के दंड की, तो कर्मों का फल भुगतने के लिए दुष्कर्मों का अधिकाधिक दंड मनुष्य जन्म में ही मिल सकता है। मनुष्य को शारीरिक कष्ट से भी अधिक मानसिक यातनाएँ सहनी पड़ती हैं। शोक, चिंता, भय, अपमान, घाटा, बिछोह आदि से वह तिलमिला उठता है, जबकि अन्य प्राणियों को मात्र शारीरिक कष्ट ही होते हैं। मस्तिष्क अविकसित रहने के कारण उनमें भी उतनी तीव्र पीड़ा नहीं होती, जितनी मनुष्यों को होती है। इस स्थिति में पापकर्मों का दंड भुगतने के लिए मनुष्य को निम्न योनियों में जाना पड़े, यह आवश्यक नहीं। यह सही है कि पुनर्जन्म सिद्धांत में प्रारब्ध कर्म का अपना विशेष महत्त्व है। पर प्रारब्ध भी किसी चमत्कार का परिणाम नहीं होता और न ही उसमें हेर-फेर सर्वथा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

असंभव होता है। लेकिन आज पुनर्जन्म को मानने वालों में बड़ी तादाद उन लोगों की है जो प्रारब्ध या दैवी-विधान को अकारण या व्यवस्था-विहीन, चमत्कारिक मानते हैं और इनमें परिवर्तन भी चमत्कार के सहारे ही संभव मानते हैं। ये दोनों ही बातें पुनर्जन्म सिद्धांत के वास्तविक आधारों के विरुद्ध हैं।

निःसंदेह ऐसे लोगों की कमी नहीं, जिनमें जन्म से ही अनेक विलक्षणताएँ होती हैं या जो प्रचलित लोक-प्रवाह से अप्रभावित, अपनी ही विशिष्टता से विभूषित देखे जा सकते हैं। इसका कारण भी दैवी चमत्कार नहीं, पिछले जन्म में वैसे विकास हेतु किया गया उनका स्वतः का प्रयास-पुरुषार्थ होता है।

महर्षि अरविंद की प्रधान सहयोगिनी श्री माँ मीरा जब फ्रांस में बाल्यावस्था व्यतीत कर रही थीं, उसी समय उन्हें दिव्य दर्शन होते थे, जो उनके पिछले जन्म के ही संस्कारों के परिणाम थे। आचार्य विनोबा भावे ने अपने बारे में कहा है कि मुझे ये भास होता है कि पूर्वजन्म में मैं बंगाली था। साथ ही जिन वस्तुओं के प्रति जन-सामान्य में प्रचंड आकर्षण होता है, उनके प्रति विनोबा में कभी आकर्षण ही नहीं हुआ। इसे भी वे अपने पिछले जन्म की कमाई मानते हैं। इस जन्म की कमाई तो वह तब होती, जब उस ओर आकर्षण होता और वे उस पर नियंत्रण करते। श्री अरविंद के एक प्रमुख शिष्य श्री अनिलवरण राय ने शैशवावस्था में ही श्रीकृष्ण के विराट स्वरूप के प्रत्यक्ष दर्शन की बात कही है। उस समय तक उन्होंने कैसी भी साधना नहीं की थी। अतः यह अनुभूति पूर्वजन्म की साधना का ही फल थी, यह बात उन्होंने स्वयं कही थी एवं योगीराज अरविंद ने भी इसे स्वीकार किया था।

पुनर्जन्म के प्रति विवेक विरुद्ध मान्यताएँ पालकर हर दुःखग्रस्त या आर्थिक दृष्टि से कुछ खोने वाले व्यक्ति को पिछले जन्म का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पापी और सुविधा सज्जित लोगों, धनकुबेरों, सत्तासीनों को विगत जन्म का पुण्यात्मा मान बैठने की मूढ़ता से बचना चाहिए। इन मापदंडों से तो राम, कृष्ण, विवेकानंद, मार्क्स, महात्मा गांधी, समेत सभी महा-मानवों को अभागा और महापापी बताना तथा अत्याचारी विलासी सामंतों-धनपतियों को महान पुण्यात्मा करार देना आसान होगा।

आवश्यकता जन्म-जन्मांतर तक चलने वाले कर्मफल के अटूट क्रम को समझने की है। उसे समझने पर ही उसकी दिशाधारा निर्धारित करने और मोड़ने में सफलता मिल सकती है। अपने भीतर की दुर्बलताओं और विकृतियों को अपनी ही भूल से चुभे काँटे समझकर धैर्यपूर्वक निकालना और घाव को पूरना चाहिए। अपनी सत्प्रवृत्तियों, श्रेष्ठ उमंगों को अपनी अमूल्य थाती समझकर उसे संरक्षित ही नहीं रखना चाहिए, अपितु बढ़ाने का भी प्रयास करना चाहिए। इस हेतु न तो किसी ग्रह-नक्षत्र की मनुहार की जरूरत है, न चमत्कारों के खोज की। अपने भीतर की देव-प्रवृत्तियों की पूजा-प्रतिष्ठा और अपनें भीतर जगमगा रहे आस्था के प्रकाशपूर्ण ग्रह-नक्षत्रों की अनुकूलता ही अपने विकास का आधार बन सकती है। यही पुनर्जन्म सिद्धांत की दार्शनिक पृष्ठभूमि और नैतिक प्रेरणा है।

□

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मरण के उपरांत पुनर्जन्म सुनिश्चित

मरण के उपरांत कुछ समय पश्चात मनुष्य का नया जन्म होता है, इस संबंध में अब उपलब्ध तथ्यों का इतना बाहुल्य है कि संदेह एवं अविश्वास की बहुत कम गुंजाइश रह गई है।

पुनर्जन्म के संबंध में नास्तिकवादियों के अतिरिक्त ईसाई, मुस्लिम धर्मों की पुरातन मान्यताएँ भी बाधक थीं। ये दोनों धर्म आत्मा का अस्तित्व बने रहने की बात तो कहते हैं, पर साथ ही यह भी बताते हैं कि महाप्रलय के उपरांत जब नई सृष्टि का सृजन होगा, तभी नया जन्म मिलेगा। इस मान्यता में लंबी अवधि का प्रतिपादन होने से पुनर्जन्म के प्रति कोई आकर्षण नहीं रह जाता और भले-बुरे कर्मों को भुगतने के लिए कुछ ही दिनों बाद नया जन्म लेना पड़ेगा यह मान्यता न रहने पर उस एकांत अवधि के प्रति निराशा जैसा चिंतन उभरने लगता है।

पुनर्जन्म की मान्यता जीवन को अनवरत रूप से गतिशील रहने का विश्वास दिलाती है और प्रगति-प्रयासों को तनिक-सा विराम लेने के उपरांत फिर से गतिशील बनने का उत्साह उत्पन्न करती है। यह परिणति की बात हुई। जहाँ तक जीवन के मरण-उपरांत के बाद भी बने रहने का प्रश्न है, वहाँ तक पुनर्जन्म के प्रमाणों से इस तथ्य की भली भाँति पुष्टि हो जाती है। इतना विश्वास लोकमानस में सुदृढ़ रह सके, तो उसकी परिणति बिना वृद्धावस्था एवं मरण की बात सोचकर निराश हुए उपयोगी उत्कर्ष क्रम को उत्साहपूर्वक जारी रखा जा सकता है। साथ ही दुष्कृत्यों से विनिर्मित हुए कुसंस्कारों का प्रतिफल अगले जन्म में भुगतने की बात को भी बहुत बड़ा बल मिल सकता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कभी पुनर्जन्म धर्म एवं दर्शन का विषय था। ये दोनों ही क्षेत्र श्रद्धा प्रधान हैं। तर्क-प्रमाण जुटाने की आवश्यकता अनुभव की जाए, तो धर्मप्रेमियों का ही समाधान हो सकता है। जिनमें तथ्यान्वेषी जिज्ञासाएँ हैं, उनको बिना आधार-प्रमाण पाए संतोष होता ही नहीं। अध्यात्मतत्त्वज्ञान की आधारशिला समझी जाने वाली पुनर्जन्म मान्यता को अब वैज्ञानिक अनुसंधान का विषय स्वीकार कर लिया है। उस संदर्भ में जो प्रत्यक्ष प्रमाण मिले हैं, उनसे पुरातन असमंजस की स्थिति धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। प्रत्यक्ष-प्रच्छन्न नास्तिकवाद को इन प्रस्तुत प्रमाणों के सम्मुख अपने पूर्वाग्रहों को छोड़ना या शिथिल करना पड़ रहा है। पुनर्जन्म की मान्यता जीवनक्रम में नीतिमत्ता एवं भविष्य की आशा बनाए रहने की दृष्टि से नितांत आवश्यक है।

डॉ० इवान स्टीवेंसन (डायरेक्टर ऑफ डिपार्टमेंट ऑफ साइकियाट्री, वर्जीनिया—यू० एस० ए०) पूर्वजन्म संबंधी शोध करने वाले व्यक्तियों के अगुआ माने जाते हैं। इस विषय पर कई शोधग्रंथ लिखे हैं।

अमेरिका के उत्तर-पश्चिमी समुद्र के किनारे रहने वाले रेड इंडियनों के पूर्वज हजारों वर्ष पूर्व एशिया से आकर वहाँ बसे हैं। इन लोगों में से एक व्यक्ति ने अपनी मृत्यु से पूर्व भावी जन्म ग्रहण का भविष्य कथन कर दिया। बाद में उसका अगला जन्म ठीक उसी आधार पर हुआ पाया गया। घटना इस प्रकार है—

१९४९ में विलियम सीनियर अपने स्थानीय क्षेत्र में मछुओं का अगुआ था। उसने अपने पुत्र और पुत्रवधू से एक दिन कहा कि यदि पुनर्जन्म नाम की चीज सचमुच होती होगी, तो मैं तुम्हारे पुत्र के रूप में जन्म लूँगा। मेरे शरीर पर इस समय जहाँ-तहाँ जो चिह्न विद्यमान

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं, वे यदि तुम्हारे पुत्र के शरीर पर भी यथावत दिखें तो समझना कि मैंने ही तुम्हारे गर्भ में अपना नया जन्म ग्रहण किया है। थोड़े ही दिनों बाद मछली मारने जाने पर नाव उलट जाने से समुद्र में डूबकर वह मर गया। इसके कुछ दिनों बाद उस मछुआरे की पुत्रवधू गर्भवती हुई और समय पूर्ण होने पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया। जिसका नाम विलियम जॉर्ज जूनियर रखा गया। जैसे-जैसे लड़का बड़ा होने लगा उसके गुण-कर्म-स्वभाव को देखते हुए उसके माता-पिता का यह विश्वास दृढ़तर होता गया कि उस लड़के की केवल आकृति ही नहीं, अपितु प्रकृति भी अपने दादा से हूबहू मेल खाती थी। इसके कुछ और भी उदाहरण-प्रमाण इस प्रकार हैं—

विलियम जॉर्ज सीनियर को बास्केट बाल खेलते हुए पैर में चोट आ गई थी, जिसके कारण वह लँगड़ाकर चला करता था। विलियम जॉर्ज जूनियर बचपन से ही इसी प्रकार लँगड़ाकर चला करता था। इतना ही नहीं, भयप्रद स्थानों पर उसका दादा जिस तरह लोगों को आगाही देते हुए गुस्सा प्रदर्शित करता था, वही आदत इसकी भी थी। इतनी कम उम्र में ही वह मछली मारने में अपने दादा जैसी निपुणता प्रदर्शित करने लगा। अपने मित्र-संबंधी और परिचितों के बारे में भी वह अच्छी-खासी जानकारी रखता था। मरने से कुछ वर्ष पूर्व विलियम ने अपने बेटे को सोने की घड़ी दी थी। एक दिन विलियम जूनियर के साथ उसकी माँ अपने जेवरों को देख रही थी। जैसे ही लड़के ने घड़ी देखी, उसने कहा—"मेरी घड़ी लाओ। घंटों की लड़-झगड़ के बाद भी उस घड़ी पर उसकी ममता कम नहीं हुई। १९ वर्ष की अवस्था तक घड़ी के प्रति उसका आकर्षण बना रहा। इसके पश्चात् युवावस्था में प्रवेश करते ही पूर्वजन्म संबंधी सारे-के-सारे लगाव क्रमशः कम होते चले गए। इस लड़के पर इवान

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

स्टीवेंसन ने किशोरावस्था में परीक्षण किया था। दोबारा युवावस्था में भी उसने प्रयोग करके सारे निष्कर्ष निकाले थे।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने अनुसंधान के आधार पर इवान स्टीवेंसन ने मृत्यु और पुनर्जन्म की मध्यावधि संबंधी कुछ निष्कर्ष निकाले हैं। उनमें से एक यह है कि भिन्न-भिन्न स्थानों पर यह अवधि भिन्न पाई गई है यथा—टर्की में नौ महीने, लंका में इक्कीस महीने, भारत में ४५ महीने तथा अलास्का के विलजिट इंडियन्स में ४८ महीने। जिनकी किसी हिंसक घटना अथवा आक्रमण से मृत्यु हुई होती है, उनका जन्म जल्दी होता है तथा वे आमतौर से अपना बदला चुकाने के लिए आते हैं। ऐसे प्रसंग से जन्म श्रीलंका और भारत में चालीस प्रतिशत तथा लेबनान और सीरिया में ८० प्रतिशत पाया गया है।

पुनर्जन्म में व्यक्ति का लिंग-परिवर्तन भी होता देखा गया है। ऐसे पूर्व देह के सामान्य लक्षण अधिकतर दो से चार वर्ष की उम्र में अधिक प्रकट होते हैं तथा ५ से ८ वर्ष की उम्र तक समाप्त हो जाते हैं।

डॉ० इयान स्टीवेन्सन ने पुनर्जन्म के सिद्धांत का निष्कर्ष निकालने से पूर्व सोलह सौ लोगों के पूर्व जन्म का अध्ययन करके कुछ ठोस अवधारणाएँ वैज्ञानिक जगत के समक्ष प्रस्तुत कीं। बचपन से विलक्षण प्रतिभाशाली व्यक्तियों के व्यक्तित्व का कारण पुनर्जन्म के सिद्धांत के द्वारा ही समझाया जा सकता है और इसके मूल में कर्म का अकाट्य सिद्धांत अविच्छिन्न अंग के रूप में जुड़ा हुआ है।

प्रो० सी० जे० डुकास (ब्राउन यूनिवर्सिटी) ने एक शोधपत्र प्रकाशित किया है, जिसका शीर्षक है—"दि डॉक्ट्रिन ऑफ इन्कार्नेशन इन दि हिस्ट्री ऑफ थॉट।" इसमें प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक की पुनर्जन्म संबंधी अनेक घटनाओं का वर्णन है। इसमें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

एडनर कैसी का भी उदाहरण दिया गया है। अमेरिका में पुनर्जन्म की बातों का प्रचलन एडगर कैसी के प्रयत्नों के फलस्वरूप स्थापित हुआ। एडगर कैसी ने यह दावा किया है कि मैं बाईबिल के समय से लेकर वर्तमान समय की पुनर्जन्म संबंधी सारी घटनाओं को संकलित कर सकता हूँ।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन प्रमाणों से पुनर्जन्म की वैज्ञानिकता तो अब तक सिद्ध नहीं हो पा रही है, किंतु पुनर्जन्म की पुष्टि करने वाले सशक्त उदाहरणों की संख्या और प्रामाणिकता दिनोदिन बढ़ती जा रही है। इससे ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि मनुष्य के लिए जो दो तत्त्व आज मान्यता प्राप्त हैं—(१) जेनेटिक हेरेडिटी (२) एनवायरनमेंटल इन्फ्लूएन्सेस, इनमें एक तीसरी बात और जुड़नी चाहिए और वह है—'कर्म का सिद्धांत।'

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक कार्ल जी० जुंग एक बार अफ्रीका में कहीं जा रहे थे। यह उनकी वहाँ की पहली यात्रा थी। वहाँ पहाड़ी पर खड़े आदिम जाति के एक व्यक्ति को देखते ही उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे यह उनकी अपनी मातृभूमि है। उस काले व्यक्ति को देखते ही उन्हें ऐसा लगा कि जैसे वह उसी स्थान पर ५,००० वर्षों से खड़ा उनकी प्रतीक्षा कर रहा हो। उस गाँव में प्रवेश करते ही उसके प्रत्येक स्थान के विषय में उन्हें ऐसा लगा, मानो वहाँ के चप्पे-चप्पे से पूर्व परिचित हों। इस प्रकार की घटना के पीछे छिपे सिद्धांत को मनोविज्ञान में 'डेजाबु' नाम से जाना जाता है। जुंग इसकी व्याख्या 'रिकॉग्नीशन ऑफ दि मेमोरी अननोन' कहकर करते हैं।

विलियम चैपमैन ह्वाइट ने इस विषय पर लिखी अपनी पुस्तक में इस प्रकार की अनेक घटनाओं का वर्णन किया है। इसमें एक इस प्रकार है। श्री व श्रीमती ब्रेलोर्न अमेरिका से पहली बार मुंबई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
घूमने आए। उन लोगों ने बताया कि—"मुझे ऐसा लगा कि जैसे मैं इस स्थान से चिर-परिचित हूँ। एक रास्ते पर चलते हुए मैंने अपनी पत्नी से कहा कि अगले मोड़ पर एक विशाल चर्च होगा और उससे थोड़ी दूर आगे चलकर जब हम गली पार करेंगे, तो डिलाईल रोड आएगा। मेरी पत्नी ने मजाक में कहा—"लगता है, आप यहाँ पहले कभी आए हुए हैं, इसीलिए आपको सभी रास्तों का पता है।" यह बात सुनते ही मैं चौक पड़ा कि—"मुझे क्यों ऐसा लग रहा है कि मैं यहाँ के प्रत्येक स्थान से पूर्वपरिचित हूँ? हम वहाँ प्रत्येक स्थान पर घूमते रहे और मुझे हमेशा ऐसा लगता रहा कि हर गली और प्रत्येक पुराना मकान मेरी अच्छी तरह देखा-भाला हुआ है। मलाबार हिल के पास पहुँचने पर श्री ब्रेलोर्न ने एक बड़े वटवृक्ष के पास खड़े सिपाही से पूछा कि—"क्या इस स्थान पर कहीं कोई पुराना मकान था?" सिपाही ने बताया कि, मेरे पिता उस मकान में काम करते थे, इसलिए मुझे पता है कि वहाँ पर एक मकान था, लेकिन वह ९० वर्ष पूर्व तोड़ दिया गया। वह मकान किसी ब्रान परिवार का था। सिपाही का उत्तर सुनते ही श्री ब्रेलोर्न ने अपनी पत्नी को याद दिलाया कि उनने भी तो अपने पुत्र का नाम ब्रान ब्रेलोर्न ही रखा है। इस आश्चर्यजनक संगति को देखकर वे विस्मित रह गए। इस प्रसंग को उद्धृत करते हुए श्री ह्वाइट पुनर्जन्म को एक वास्तविकता मानते हैं।

बेंगलूर के मानसिक स्वास्थ्य तथा स्नायुतंत्र विज्ञान के राष्ट्रीय प्रतिष्ठान (निमहन्स) द्वारा किए गए एक अध्ययन में बताया गया है कि परीक्षण किए गए ६० में से ४५ मामलों में पुनर्जन्म के दावों पर पर्याप्त व ठोस प्रमाण मिले हैं। अध्ययन के दौरान प्रतिष्ठान के सामने २०० मामले आए, जिनमें से अधिकांश उत्तरप्रदेश, राजस्थान,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

पंजाब व मध्यप्रदेश के थे। लगभग आधे लोगों ने बताया कि पूर्वजन्म
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
में उनकी अप्राकृतिक मृत्यु हुई थी। पुनर्जन्म की कथाएँ सुनाने वाले सभी की आयु १० वर्ष के भीतर थी। इनमें एक-तिहाई संख्या लड़कियों की थी।

संस्कारों की महत्ता

पुनर्जन्म किस योनि में या किस स्थिति में होगा, यह मृतक के अपने संस्कार समुच्चय पर बहुत कुछ निर्भर है। जिधर अपना रुझान, झुकाव या अभ्यास होता है, उसी दिशा में मन मुड़ता है और अपने अनुरूप वातावरण तलाश कर लेता है। एक ही बगीचे में भौंरा फूल पर बैठता है और गुबरीला सड़े गोबर की माँद ढूँढ़ निकालता है। संस्कार उसी रुझान को कहते हैं। इसके अतिरिक्त संचित कार्यों के भले-बुरे परिणाम भी अपने विधान-आकर्षण से प्राणी को अपनी ओर खींच बुलाते हैं। इन्हीं रस्से से बँधा हुआ प्राणी पुनर्जन्म के लिए स्थान एवं वातावरण ढूँढ़ निकालता है।

शास्त्र मत इस संदर्भ में इस प्रकार है—

मनसेदं शरीरं हि वासनार्थं प्रकल्पितम्।
कृमिकोशप्रकारेण स्वात्मकोश इव स्वयम्॥
करोति देहं संकल्पात्कुम्भकारो घटं यथा॥

—योग वासिष्ठ

जिस प्रकार रेशम का कीड़ा अपने रहने के लिए अपने आप ही कोश तैयार कर लेता है, वैसे ही मन ने भी अपने संकल्प से शरीर को इस प्रकार बनाया है, जिस प्रकार कुम्हार घड़ा बनाता है।

काले काले चिता जीवस्त्वन्योन्यो भवति स्वयम्।
भविताकारवानन्तर्वासनाकलिकोदयात् ॥

—योग वासिष्ठ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

अपने भीतर की वासना को मूर्तरूप देने की इच्छा से आकार धारण करने के लिए जीव अपना शरीर बदलता है।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीमद्भागवत में एक अत्यंत मार्मिक आख्यायिका आती है। जिसमें देवर्षि नारद ने मरते हुए व्यक्ति को देखा, तो उनका अंत:करण जीव के मायावी बंधन को देखकर द्रवित हो उठा। मृतक के शव के समीप खड़े कुटुंबीजन तथा पुत्र विलाप कर रहे थे। नारद ने जीवात्मा को समझाया, वत्स ! इस संसारी बंधन को छोड़कर मेरे साथ चल और जीवन मुक्ति का आनंद ले। किंतु मृतक पिता की आसक्ति विलाप कर रहे कुटुंबियों से जुड़ी थी। नारद की ओर उसने ध्यान नहीं दिया और अपने वासनामय सूक्ष्मशरीर से वहीं घूमता रहा। कुछ दिन बाद उसने पशुयोनि में प्रवेश किया और बैल बनकर अपने किसान बेटे की सेवा करने लगा।

कुछ दिन पश्चात् नारद पुनः आए और बैल के पिंजरे में बंद जीव से मिले और पूछा, "तेरा मन हो तो चल और अच्छे लोकों का आनंद ले। बैल ने कहा—"भगवन! अभी तो बेटे की आर्थिक स्थिति खराब है मैं इसे छोड़कर कैसे चलूँ?" नारद जी चले गए। जीव डंडे खाकर भी बेटे की आसक्ति में डूबा रहा। मृत्यु के समय भी आसक्ति कम न हुई, सो कुत्ता बनकर बेटे की संपत्ति की रक्षा करता रहा। पूर्वजन्मों के संस्कार और मोह-भावना में तल्लीन उस कुत्ते को मिलती दुत्कार और डंडे। फिर भी उसने मालिक बने पुत्र का दरवाजा नहीं छोड़ा।

देवर्षि नारद पुनः आए और चलने को कहा, तो कुत्ते ने कहा— "भगवन! आप देखते नहीं, मेरे बेटे की संपत्ति को चोर-डाकू ताकते रहते हैं, ऐसे में उसे छोड़कर कहाँ जाऊँ?" नारद ने कहा—"वत्स! तू जिन इंद्रियों को सुख व साधन समझता है, वे तुझे बार-बार धोखा देती

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं, फिर तू उसके पीछे [illegible] क्यों [illegible] है, किंतु तुझे [illegible] समझ में कहाँ आती ? मानवीय सत्ता तो इसे समझ नहीं पाती।''

जीव को बेटे के व्यवहार से क्रोध आया और अपना हिस्सा लेने के प्रतिशोध की भावना से कुत्ते का शरीर छोड़कर चूहा बना। उस स्थिति में भी नारद ने समझाया, परंतु उसे फिर भी ज्ञान न हुआ। चूहे से तंग आकर किसान बेटे ने विष मिले आटे की गोलियाँ रखीं। चूहा मर गया। चूहे ने देखा कि इस बार विष देकर मेरा प्राणांत किया गया है। उसका मन क्रोध और प्रतिशोध की भावना से जल उठा। फलतः उसे सर्प योनि मिली। क्रोधित हो सर्प बदला लेने बिल से जैसे ही बाहर निकला कि घर वालों ने उसे लाठियों, पत्थरों से कुचल-कुचलकर मार डाला। अब नारद जी ने उधर जाना ही व्यर्थ समझा, क्योंकि वे समझ चुके थे कि अभी वह प्रतिशोध की धुन में चींटी, मच्छर, मक्खी न जाने क्या-क्या बनेगा ? भौतिक शरीर के साथ सदा-सर्वदा के लिए जीवन की समाप्ति नहीं हो जाती। नए कलेवर के रूप में जीव अपने कर्मानुसार परिस्थितियाँ लिए पुनः प्रकट होता है। इस तथ्य की पुष्टि धर्म ही नहीं, तर्क एवं प्रमाण भी करने लगे हैं। विज्ञान भी दबी जुबान से पुनर्जन्म का समर्थन करने लगा है। सचाई को और भी गहराई से परखने के लिए वैज्ञानिक प्रयासरत हैं। वह दिन दूर नहीं जब पुनर्जन्म तथा उससे जुड़ा कर्मफल का अकाट्य सिद्धांत सर्वत्र स्वीकार होगा। तब निश्चित ही मानव जाति को जीवनयापन के लिए स्पष्ट आचार संहिता प्राप्त होगी। विज्ञानसम्मत मूल्यों के आधार पर जीवन जीने वालों के लिए वह अनिवार्य है भी।

मरने वाला फिर भी जन्मेगा

वह भ्रम अब क्रमशः छटता जा रहा है, जिसमें मरणोत्तर जीवन एवं पुनर्जन्म से इनकार किया जाता था। ईसाई और मुस्लिम मान्यताओं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

के अनुसार सृष्टि और प्रलय के मध्य मात्र एक बार जन्म होता है।
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
दूसरे जन्म की बात प्रयत्न से न्याय हो जाने के बाद ही संभव होती है। सृष्टि और प्रलय के मध्य अरबों वर्ष का अंतर होना चाहिए। इतनी अवधि के बाद जन्म होना एक प्रकार से निराशाजनक ही माना जाएगा और यही कहा जाएगा कि अवसर उसके हाथ से प्रायः सदा के लिए चला गया।

दूसरा वर्ग प्रत्यक्षवादियों का है, जो आत्मा का अस्तित्व ही स्वीकार नहीं करते और कहते हैं, शरीर के साथ ही जीवन का आरंभ होता है और उसकी समाप्ति के साथ उस सत्ता का सदा-सर्वदा के लिए अंत हो जाता है। उसकी दृष्टि में जीवन ही जीव है। जीवन की समाप्ति के साथ ही जीव का आत्यंतिक अंत है।

इन प्रतिपादनों को पुनर्जन्म की घटनाएँ चुनौती देती हैं और पूछती हैं कि पुनर्जन्म की स्थिति से संबंधित जो प्रामाणिक घटनाएँ सामने आती रहती हैं फिर उनका कारण क्या है?

ऐसी घटनाएँ संसार भर में घटित होती पाई गई हैं, जिसमें बच्चों ने अपने पूर्वजन्मों के विवरण न केवल सुनाए हैं, वरन उन अपरिचित स्थानों पर पहुँचकर वस्तुओं एवं व्यक्तियों को पहचाना तथा घटित हुए घटनाओं का ऐसा विवरण बताया है, जिसके संबंध में कुछ संबद्ध लोगों के अतिरिक्त अन्यों को कुछ पता ही नहीं हो सकता था। ऐसी दशा में सिखा-पढ़ाकर कुछ कहला लेने का संदेह भी नहीं किया जा सकता।

बिहार के दरभंगा जिले के बेहरा नामक स्थान के निवासी श्री ब्रजकिशोर वर्मा एक होम्योपैथ डॉक्टर थे। उनके यहाँ एक कन्या का जन्म हुआ, जिसका नाम कुमकुम रखा गया। बचपन से ही वह अपनी दादी श्रीमती गंगावती वर्मा से अत्यधिक स्नेह रखती थी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक दिन दादी अम्मा बच्चों को चूड़ा परोस रही थीं, तभी कुमकुम बोली—"दादी अम्मा! आप ही की तरह मैं भी अपने बच्चों को चूड़ा परोसा करती थी। मैं सच कह रही हूँ दादी अम्मा, मेरा घर दरभंगा में ही उर्दू बाजार में है।"

घर के लोग प्रारंभ में उसकी बातों में काफी रस लेते थे। कुमकुम उनके हर प्रश्न का ऐसा उत्तर देती थी, मानो सचमुच वह किसी संपन्न घर की पुरखिन हो। लेकिन कुछ ही दिनों में उसके माता-पिता उससे परेशान हो गए। वे समझ नहीं पाते थे कि इस साढ़े तीन-चार वर्ष की बच्ची को कैसे समझाया जाए?

एक दिन बेहरा में मेला लगा था। कुमकुम की माँ ने उस दिन सोने के लाकेट वाली चेन और नई साड़ी पहनी। कुमकुम को भी नई फ्राक पहनाई गई। माँ के गले की चेन देखकर उसने कहा—"मेरी चेन तुम्हारी चेन से अधिक चमकीली थी। मैं भी गहने पहनूँगी, मैं अपनी तिजोरी से पैसा निकालूँगी और बहुओं से मिलने जाऊँगी।" इस प्रकार से हठ करते हुए वह रोने लगी। वह अकसर अपने पूर्वजन्म के बहू-बेटों से मिलने के लिए मचलने लगती थी।

आखिर डॉ० ब्रजकिशोर वर्मा ने दरभंगा राज के एक स्पेशल अफसर और अपने अंतरंग मित्र पंडित हरिश्चंद्र मिश्र के सामने अपनी यह विषम समस्या रखी। उन्हें यह मामला अपनी पकड़ से बाहर होता प्रतीत हो रहा था।

पंडितजी ने सोचा, हो न हो यह मामला पुनर्जन्म का है। सो कुमकुम से स्वयं पूछने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि उसके उर्दू बाजार वाले घर के सामने एक शिवजी का मंदिर था, जहाँ वह नित्य-नियमित रूप से पूजा करने जाया करती थी। उसकी बहू ने जहर खिलाकर उसकी जान ले ली। उन लोगों के यह पूछने पर कि वे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

उसके घर को कैसे पहचानेंगे? उसने बताया कि "मेरे घर के पीछे CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
एक सिनेमाघर है।"

डॉ० वर्मा कुमकुम की सूचना और पं० हरिश्चंद्र मिश्र की सहायता से कुमकुम के पूर्वजन्म के मकान को बिना किसी दिक्कत के खोजने में सफल हो गए। घर के मुखिया मिसरीलाल (कुमकुम के पूर्वजन्म का बड़ा बेटा) ने घर के बाजू में बने पोखर के बारे में बताया कि वह उसकी माँ के जीवनकाल में ही तैयार किया गया था। पड़ोसियों ने यह भी बताया कि मिसरीलाल की माँ ने एक पूँछ कटा साँप भी पाल रखा था, जिसे वह बड़ी हिफाजत से रखती थी। वह एक धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थी और मंदिर में भगवान शंकर की पूजा किए बिना वह भोजन नहीं करती थी।

पारलौकिक विद्या के प्रसिद्ध विद्वान डॉ० इवान स्टीवेंसन ने कुमकुम के पूर्वजन्म के विवरणों का अध्ययन कर उसे सही पाया। उस समय वे पुनर्जन्म की सत्यता की जाँच के सिलसिले में विभिन्न देशों का भ्रमण करते हुए भारत आए थे। डॉ० स्टीवेंसन ने बताया कि मृत्यु के समय व्यक्ति की जैसी बुद्धि होती है, वैसा ही अगला जन्म होता है।

'आफ्टर डेथ' नामक पुस्तक सन् १८९७ में प्रकाशित हुई थी, तब से अब तक इसके लगभग बीस संस्करण कई भाषाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इसमें जूलिया नामक लड़की का विवरण बड़े ही मार्मिक ढंग से लिखा गया है। जूलिया बहुत ही सुंदर एवं बहुत ही रंगीन स्वभाव की लड़की थी। उसके अनेक मित्र थे। मित्रों से वह कहा करती थी कि यदि मेरी मृत्यु हुई तो भी मिलती अवश्य रहूँगी। संयोगवश १२ दिसंबर १८९१ में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी प्रेतात्मा अपने मित्रों से मिलने के लिए भटकने लगी। इस बात को

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसके सभी मित्रों एवं अन्य अपरिचित व्यक्तियों ने स्वीकार किया और बताया कि जूलिया की आत्मा अपने मित्रों के लिए भटकती रहती है, वह उन्हें देखती है, पर स्वयं न देखे जाने या स्पर्शजन्य अनुभूति का आनंद न प्राप्त कर सकने के कारण वह उद्विग्न एवं खिन्न रहती है।

कुछ वर्ष पूर्व नागपुर के एक स्थानीय अस्पताल में श्रीमती उत्तरा हुद्दार को चर्म रोग की चिकित्सा के लिए भरती किया गया, लेकिन वहीं से उन्हें विचित्र दौरे आने शुरू हुए। पहले तो वे दस-पंद्रह मिनट तक ही उस अवस्था में रहती थीं, लेकिन बाद में वही स्थिति दस-पंद्रह दिनों तक के लिए रहने लगी। अँगरेजी और मराठी के अलावा क़ोई अन्य भाषा न तो वे और न उनके परिवार में ही कोई जानता था। लेकिन उक्त अवधि में वे धारा-प्रवाह बंगला बोलते हुए अपने को सप्तग्राम की निवासी 'शारदा' नामक महिला बताती थीं। यों तो ये दौरे उन्हें आकस्मिक रूप से ही आते थे, लेकिन एक बार जब उनके भाई कैमरे से उनकी तसवीर लेने जा रहे थे, वह अचानक चीखते-चिल्लाते हुए भागने लगीं। पूछने पर उन्होंने बताया मेरा भाई गले में काला साँप लटकाए मुझे मारने आ रहा है। बड़ी मुश्किल से उन्हें पकड़ा जा सका।

श्रीमती उत्तरा हुद्दार ३७ वर्ष की आकर्षक, सौम्य व्यक्तित्व वाली सुशिक्षित गृहिणी थीं तथा नागपुर की एक स्थानीय यूनीवर्सिटी में मराठी की व्याख्याता थीं। उनका यह व्यवहार सभी को विचित्र लगा।

परिवार वाले किंकर्त्तव्यविमूढ़ थे। आखिर इस लाइलाज मर्ज से परेशान होकर उन्होंने 'मनोचिकित्सकों' की शरण ली। स्थानीय अस्पताल के डॉक्टरों ने इस केस को डॉ० स्टीवेंसन को सौंप दिया। इस कार्य में डॉ० स्टीवेंसन के साथ कलकत्ता (कोलकाता) के दो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्य परामनोवैज्ञानिक डॉ० आर० के० सिन्हा तथा प्रो० विपिंद्र पाल भी कार्यरत थे। इन तीनों ने मिलकर उत्तरा हुद्दार की केस हिस्ट्री तैयार की। जब-जब दौरा पड़ता और उत्तरा अपनी पिछली कहानी दोहराती, डॉक्टर उसे टेपरिकार्ड कर लेते। उत्तरा के व्यवहार का मनोवैज्ञानिक अध्ययन भी किया गया।

अनेक प्रयोगों के बाद उत्तरा के पिछले जन्म अर्थात शारदा के जीवन की कहानी का 'लेआउट-सा' तैयार हुआ। शारदा का जन्म सप्तग्राम (बंगाल) में लगभग १५० वर्ष पूर्व हुआ था। उसकी माँ शायद बहुत ही पहले मर चुकी थी। इसलिए शारदा का पालन-पोषण उसकी मौसी ने किया था। उसके पिता बृजनाथ चट्टोपाध्याय एक प्रसिद्ध कंकाली मंदिर के प्रधान पुजारी थे। सोमनाथ और यतींद्रनाथ उनके दो छोटे भाई थे। शारदा के पति विश्वनाथ एक वनस्पति विशेषज्ञ थे।

शारदा माँ बनने के दो अवसर खो चुकी थी। तीसरी बार प्रसवकाल से लगभग ३ माह पूर्व वह एक दिन आँगन में बैठी धान साफ कर रही थी। पास की झाड़ियों से निकलकर एक नाग ने उसे डस लिया। शोर सुनकर काफी लोग इकट्ठे हो गए। शारदा के पति को भी सूचना दी गई, जो खुद भी किसी सर्प दंशित व्यक्ति के इलाज के लिए पड़ोस के गाँव में गए हुए थे। समाचार सुनते ही वे घोड़े पर दौड़े चले आए। शारदा अपने प्रलापों में भी कहा करती थी, देखो मेरे पति घोड़े पर चढ़े चले आ रहे हैं। लेकिन जब तक जहर काफी फैल चुका था। अतः शारदा बचाई नहीं जा सकी।

डॉ० स्टीवेंसन के अनुसार जिनकी मृत्यु किसी उत्तेजनात्मक आवेशग्रस्त मनःस्थिति में हुई हो, उनमें पिछले जन्म की स्मृति अधिक स्पष्ट रहती है। दुर्घटना, हत्या, आत्महत्या, प्रतिशोध, कातरता,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मोहग्रस्तता, अतृप्ति का विक्षुब्ध घटनाक्रम प्राणी की चेतना पर गहरा प्रभाव डालता है और वे उद्वेग अगले जन्म में भी स्मृति–पटल पर उभरते रहते हैं। जिस व्यक्ति से अधिक प्यार या द्वेष रहा हो, उसका विशेष रूप से स्मरण बना रहता है।

डॉ० स्टीवेंसन के शोध रेकार्ड में एक पाँचवर्षीय लड़की की घटना है, जो हिंदी भाषी परिवार में जन्म लेकर भी बँगला गीत गाती और उसी शैली में नृत्य करती थी। जबकि कोई बंगाली उसके घर–परिवार के समीप नहीं था। उसने अपना पूर्व जीवन सिलहट से संबंधित बताया। इस जन्म में वह जबलपुर में पैदा हुई, लेकिन उसकी पूर्वजन्म की स्मृतियाँ ९५ प्रतिशत सही साबित हुईं।

इंग्लैंड के नार्थंबर लैंड के श्री पोलक की दो लड़कियाँ सड़क पर मोटर की चपेट में आकर मर गईं। बड़ी लड़की जोआना ११ वर्ष की थी तथा छोटी जैक्लीन ६ वर्ष की।

दुर्घटना के कुछ समय बाद श्रीमती पोलक गर्भवती हुईं तो उन्हें न जाने क्यों हमेशा यह महसूस होता था कि उनके गर्भ में वे ही जुड़वाँ बच्चे हैं। डॉक्टरी जाँच कराने पर उनकी धारणा सही साबित हुई। बाद में दो लड़कियों का ही जन्म हुआ तथा उनमें एक का नाम गिलियन और दूसरी का जेनिफर रखा गया। ये अपने पूर्वजन्म के सभी चिह्नों को अपने शरीर पर धारण करके ही जन्मी थी। इन दोनों को अपनी मृत बहनों के बारे में कुछ भी नहीं बताया गया था, लेकिन वे अपने पूर्वजन्म की घटनाओं की आपस में चर्चा करती हुई पाई गईं। समयानुसार उन्होंने अपने पूर्वजन्म के इतने प्रमाण प्रस्तुत किए कि लोगों को यह मानने को बाध्य होना पड़ा कि दुर्घटना में मरी बहनों ने भी इस बार एक साथ ही पुनर्जन्म लिया है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुनर्जन्म होने और पूर्वजन्म की स्मृति बनी रहने वाली घटनाओं की श्रृंखला में एक कड़ी माइकेल शेल्डन की इटली यात्रा की है। इटली में तो प्रत्यक्षतः उसे कुछ आकर्षण नहीं था और न कोई ऐसा कारण था जिसकी वजह से इस यात्रा के बिना उसे चैन ही न पड़े, कोई अज्ञात प्रेरणा उसे इसके लिए एक प्रकार से विवश कर रही थी। माइकेल ने यात्रा के कुछ ही पूर्व एक स्वप्न देखा कि वह इटली के किसी जानी-पहचानी गली में घुसकर एक पुराने मकान में जा पहुँचा है। जीने में चढ़ते हुए वह चिर-परिचित दुमंजिले कमरे में सहज स्वभाव घुस गया और देखा एक लड़की घायल पड़ी है, उसके गले पर छुरे के गहरे घाव हैं और रक्त बह रहा है। अनायास ही उसके मुँह से निकला—मारिया! मारिया!! घबराना मत, मैं आ गया। सपना टूटा। शेल्डन इस विचित्र स्वप्न का कुछ मतलब न समझ सका और आतंकित बना रहा। फिर भी यात्रा तो उसने की ही।

जब वह जिनोआ की सड़कों पर ऐसे ही चक्कर लगा रहा था, तो उसे वही स्वप्न वाली गली दिखाई पड़ी। अनायास ही पैर उधर मुड़े और लगा कि वह किसी पूर्वपरिचित घर की ओर चला जा रहा था। स्वप्न में देखी कोठरी यथावत थी, वह सहसा चिल्लाया—मारिया! मारिया!! तुम कहाँ हो?

जोर की आवाज सुनकर पड़ोस के घर में से एक बुढ़िया निकली, उसने कहा—"मारिया तो कभी की मर चुकी। अब वह कहाँ है? पर तुम कौन हो? बुढ़िया ने शेल्डन को घूर-घूरकर देखा और पहचानने के बारे में आश्वस्त होकर बोली—लुइगी ब्रोंदोनो! तुम तो इतने अरसे बाद लौटे अब तक कहाँ रह रहे थे?"

इतना कहकर बुढ़िया हवा में गायब हो गई, तो शेल्डन और भी अधिक अकचकाया उसे ऐसा लगा मानो किसी जादू की नगरी में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

घूम रहा है। अपरिचित जगह में ऐसे परिचय मानो सब कुछ उसका जाना-पहचाना ही हो। बुढ़िया भी उसकी जानी-पहचानी हो, घर भी गली भी ऐसी है मानो वह वहाँ मुद्दतों रहा हो। मारिया मानो उसकी कोई अत्यंत घनिष्ठ परिचित हो।

हतप्रभ शेल्डन को एक बात सूझी, वह सीधा पुलिस स्टेशन गया और आग्रहपूर्वक यह पता लगाने लगा कि क्या कभी कोई मारिया नामक लड़की वहाँ रहती थी? क्या वह कत्ल में मरी? तलाश कुतूहल की पूर्ति के लिए की गई थी, पर आश्चर्य यह कि १२२ वर्ष पुरानी एक फाइल ने उस घटना की पुष्टि कर दी।

पुलिस-रेकार्ड के कागजों ने बताया कि उसी मकान में मारिया बुइसाकारानेबो नामक एक १९ वर्षीय लड़की रहती थी। उसकी घनिष्ठता एक २५ वर्षीय युवक लुइगी ब्रोंदोनो नामक युवक से थी। दोनों में अनबन हो गई, तो युवक ने छुरे से उस लड़की पर हमला कर दिया और कत्ल करने के बाद इटली छोड़कर किसी अन्य देश को भाग गया। तब से अब तक उसका कोई पता नहीं चला।

शेल्डन को यह विश्वास पूरी तरह जम गया कि वही पिछले जन्म में मारिया का प्रेमी और हत्यारा रहा है। यह तथ्य उसे न तो स्वप्न प्रतीत होता था और न भ्रम वरन जब भी चर्चा होती, उसके कहने का ढंग ऐसा ही होता मानो किसी यथार्थ तथ्य का वर्णन कर रहा है।

इस घटना को परा मनोवैज्ञानिकों ने अपनी शोध का विषय बनाया। शेल्डन से लंबी पूछ-ताछ की, पुलिस-कागजात देखे और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जो बताया गया है—उसमें कोई बहकावा या अतिशयोक्ति नहीं है। इस प्रकार की अन्य घटनाओं के विवरणों पर गंभीर विचार करने के बाद शोधकर्त्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

अतींद्रिय चेतना की स्फुरणा से ऐसी घटनाओं की स्मृति भी सामने
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
आ सकती है, जिनका न तो वर्तमानकाल से कोई सीधा संबंध है और न अनुभव करने वाले व्यक्ति को इस तरह की कोई जानकारी या जिज्ञासा। ये स्मृतियाँ पूर्वजन्म की ही हो सकती हैं।

कोपेनहेगेन (डेनमार्क) में एक छह-सात वर्षीय बालिका थी, उसका नाम था लूनी मार्कोनी। जब वह तीन वर्ष की थी, तभी से वह अपने माता-पिता से कहती रहती कि वह फिलीपाइन्स की है और वहाँ जाना चाहती है। उसके पिता एक रेस्टोरेंट के स्वामी हैं, वह अपना नाम मारिया एस्पीन बताती। यह बच्ची अपने पूर्वजन्म के संस्मरण इतनी ताजगी से सुनाती, जैसे वह अभी कल-परसों की ही बात हो। उसने यह भी बताया कि उसकी मृत्यु १२ वर्ष की आयु में बुखार आने के कारण हुई थी। लड़की के दावों की जाँच करने के लिए परामनोविज्ञान के शोधकर्ता प्रो० श्री हेमेंद्रनाथ बनर्जी फिलीपाइन्स गए। वहाँ उन्होंने सारी बातें सत्य पाईं। यह १९६८-६९ के लगभग की बात है।

ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डिक्सन स्मिथ बहुत समय तक मरणोत्तर जीवन के संबंध में अविश्वासी रहे। पीछे उन्होंने प्रामाणिक विवरणों के आधार पर अपनी राय बदली और वे परलोक एवं पुनर्जन्म के समर्थक बन गए। उन्होंने अपनी पुस्तक "न्यू लाइट ऑन सरवाइवल" में उन तर्कों और प्रमाणों को प्रस्तुत किया है, जिनके कारण उन्हें अपनी सम्मति बदलने के लिए विवश होना पड़ा।

हालीवुड के प्रसिद्ध सिनेमा-अभिनेता ग्लेन फोर्ड ने भी अपने पूर्वजन्मों का वृत्तांत बताकर वैज्ञानिकों, परामनोवैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है। एक दिन अचानक अँगरेजी में बात करते हुए उन्होंने अपना परिचय उन्नीसवीं सदी के एक संगीत शिक्षक के रूप में दिया। पियानो पर उन्होंने उन्नीसवीं सदी की एक प्रचलित धुन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी सुनाई, जबकि इस जीवन में उन्हें पियानो का कोई अभ्यास न था। खोज-बीन करने पर मालूम हुआ कि उक्त संगीतज्ञ की मृत्यु १८९१ में क्षय रोग के कारण हुई थी तथा वह एक प्रख्यात संगीतज्ञ था। ग्लेनफोर्ड द्वारा बताए गए सारे विवरण सही पाए गए।

वस्तुतः पिछले चार दशकों में वैज्ञानिकों का चिंतन काफी सीमा तक बदला है एवं उन्होंने प्रमाणों, साक्षियों के आधार पर तथ्यों को मान्यता देना स्वीकार कर लिया है। वैज्ञानिकों की अधिकाधिक संख्या का परामनोविज्ञान में रुचि लेना यही बताता है। पुनर्जन्म के घटना प्रसंग इन वर्षों में बड़ी संख्या में प्रकाश में आए हैं।

सन् १९५१ में सहारनपुर में भी ऐसी ही एक घटना घटी। इस घटना का विवरण बाद में धर्मयुग और नवनीत के भूतपूर्व संपादक श्री सत्यकाम विद्यालंकार ने नवनीत पत्रिका में प्रकाशित किया था। श्रीमती वंदना का परिवार सहारनपुर के संपन्न और प्रतिष्ठित परिवारों में से एक था। एक दिन उन्हें डाक से चिट्ठी मिली कि दो साल की एक लड़की बार-बार आपके परिवार से संबंधित होने की बात कहती है। उसके माता-पिता संकोचवश कुछ कहना नहीं चाहते, लेकिन मुझे विश्वास है कि यह पुनर्जन्म का मामला है। पत्र में उस परिवार से संपर्क करने का निवेदन भी किया गया था। पहले तो श्रीमती वंदना ने इसे फ्राड समझा और पत्र पर कोई ध्यान नहीं दिया। एक बार जब वे सहारनपुर के ही एक महिलाश्रम के कार्यक्रम में सम्मिलित होने जा रही थीं, तो एक बालिका उनके पास आई, साथ में उसकी माँ भी थी। उस बालिका ने वंदना जी की ओर इशारा कर कहा—"यह रही मेरी भाभी और यह गुड्डी है, श्रीमती वंदना जानती थी कि दो ही लड़कियाँ उन्हें भाभी कहती थीं। एक तो उनकी स्वर्गीय लड़की सुधा, जिसकी २१ वर्ष की आयु में चार

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
साल पहले मृत्यु हो चुकी थी और दूसरी जयमाला, जिसे बालिका ने गुड्डी कहा था और उस समय यह श्रीमती वंदना के पास ही बैठी थी। गुड्डी जयमाला का बचपन का नाम था, अब उसे सभी जयमाला कहकर पुकारते थे।"

श्रीमती वंदना को एकाएक कुछ दिनों पहले मिली चिट्ठी की याद आ गई, पर उनका मन इस बात पर विश्वास करने को नहीं हो रहा था। उक्त बालिका जिसका नाम सरला था, वंदनाजी की गोदी में आकर बैठ गई। सरला की माँ उस समय महिलाश्रम द्वारा चलाए जा रहे स्कूल में अध्यापिका थीं और वंदना के पति सेठ लक्ष्मण प्रसाद उस स्कूल के प्रबंधकों में से थे। कई तरह के सवाल-जवाब के बाद वंदना जी सरला को अपनी कोठी ले गईं, ताकि वास्तविकता का पता लगाया जा सके। वंदना जी की कार जैसे ही कोठी के सामने पहुँची वैसे ही सरला जी ने अपनी सीट पर से उतरते हुए कहा—"आ गई मेरी कोठी।" कार में से सबसे पहले सरला जी ही उतरीं। उतरते ही वह कोठी के अंदर तेजी से इस तरह दौड़ती चली गईं जैसे वह कोठी उसकी जानी-पहचानी हो। सरला ने कोठी में पिछले जन्म की अपनी अलमारी, पुस्तकों, कपड़ों और अन्य वस्तुओं के बारे में बताया, जो अक्षरशः सत्य निकलीं।

नौ साल की आयु तक सरला को अपने पिछले जन्म की सभी बातें याद रहीं। बाद में वह उन बातों को धीरे-धीरे भूलने लगी। इस घटना का विवरण लिखते हुए बाद में श्री विद्यालंकार ने लिखा—"पिछले दिनों यात्रा में मुझे श्रीमती वंदना, जिनकी आयु लगभग ६५ वर्ष थी, मिलीं। उन्होंने मुझे यह घटना बताई। यह घटना आत्मा की जन्म-जन्मांतरों में होने वाली यात्रा का समर्थन करती है। पूर्वजन्म संबंधी इस घटना के ये अनुभव पूरी तरह प्रामाणिक हैं, ऐसा मेरा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विश्वास है। क्योंकि श्रीमती वंदना से मैं स्वयं बहुत अच्छी तरह परिचित हूँ।''

८ अगस्त १९८० दैनिक पत्र हिंदुस्तान के रविवार अंक में छपी पुनर्जन्म की एक और घटना उल्लेखनीय है। 'सिम्मी' नामक एक बालिका का जन्म ग्राम बस्सी पढाणाँ जिला पटियाला (पंजाब) के निवासी ईश्वरीदास पाठक के घर २ फरवरी १९७६ को हुआ। एक दिन अपने माता-पिता से बोली कि, मैं अपने पति मोहिंदर सिंह को देखना चाहती हूँ । बालिका ने उक्त व्यक्ति का पता भोजपुर बाजार, सलापड़ मंडी के निकट बताया। बारंबार आग्रह करने पर वास्तविकता का पता लगाने के लिए उसके पिता उक्त ग्राम में पहुँचे। पूछताछ द्वारा मालूम हुआ कि मोहिंदर सिंह नामक एक ड्राइवर है। उसकी पत्नी कुछ वर्ष हुए मर गई। उसने मोहिंदर सिंह को देखते ही पहचान लिया तथा बताया कि पूर्वजन्म के उसके पति हैं। बालिका ने अनेक ऐसे प्रामाणिक घटनाओं का भी उल्लेख किया जिसकी जानकारी मात्र मोहिंदर सिंह एवं उसकी पत्नी को थी। इसी आधार पर यह घटना विश्वस्त व प्रामाणिक मानी गई।

सन् १९५३-५४ में अमेरिका के मर्सर नाम के एक कसबे में एक साधारण परिवार में जुड़वाँ लड़कियों ने जन्म लिया। एक का नाम रखा गया गेल और दूसरी का सुसान। दोनों को ही खेलने-कूदने का बड़ा शौक था और पढ़ाई-लिखाई में उनका कम ही मन लगता था। पर जैसे-जैसे दोनों बड़ी होने लगीं, गेल गंभीर रहने लगी और ऐसी बातें कहने लगी, जो उसने न तो कभी पढ़ी थी और न ही सुनी थी। उदाहरण के लिए वह कुछ यहूदियों के नाम लेती। आरंभ में तो वह अपनी बहन से ही इस तरह की बातें करती, परंतु पिता को जब इस बात का पता चला, तो उन्होंने पूछा, ''तुम इन लोगों को

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

कैसे जानती हो ? यहाँ आस-पास तो कोई यहूदी नहीं है।" गेल ने बताया कि ये लोग जर्मनी के हैं और पिछले जन्म में उसके साथ रहे थे। इन लोगों के साथ वह हिटलर के यातना शिविर में रही थी और उस शिविर में ही उनकी मृत्यु हो गई थी।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गेल बार-बार इस तरह की बात दोहराती, तो उसके पिता ने अमेरिका के एक पुनर्जन्म विशेषज्ञ को यह सब बताया। परामनोविज्ञान शास्त्री डॉ० जूलहर्ट ने इस मामले की गंभीरता से जाँच की और पाया कि गेल जो भी बातें कहती है, वे सब सही हैं। तथ्यों के रूप में उनके प्रमाण भी प्राप्त हुए हैं। आश्चर्य की बात तो यह कि ईसाई परिवार में जन्म लेने के बावजूद भी गेल अपने को यहूदी मानती थी। १८ साल की आयु में भी उस पर पिछले जन्म के संस्कार इतने प्रभावशाली थे कि वह अपने कसबे के गिरजे में न जाकर वहाँ से १५ मील दूर स्थित यहूदियों के उपासना-गृह में जाती थी।

पुनर्जन्म के प्रभाव स्वरूप ऐसी एक नहीं असंख्य घटनाएँ हैं। आएदिन इस तरह की एक-न-एक घटना प्रकाश में आती ही रहती है और इस तथ्य को प्रमाणित करती है कि मृत्यु जीवन का अंत नहीं है, वरन जीवन यात्रा मील का एक पत्थर है, जिसे पार करने के बाद यात्रा की और भी मंजिलें आती हैं। अस्तु, मृत्यु से डरने का कोई कारण नहीं।

यह निश्चित है कि एक बार जन्म लिया है, तो मृत्यु निश्चित रूप से आएगी ही। मृत्यु को निश्चित और अनिवार्य जानकर उससे भयभीत न हों और न ही उससे घबराएँ। जन्म और मरण का युग्म है। इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥

—२/१२-१३

"कदाचित् मैं नहीं था और तुम नहीं थे, ऐसी भी बात नहीं है और ये राजा भी नहीं थे, ऐसी भी बात नहीं। इतना ही नहीं, इसके बाद हम सभी नहीं होंगे, ऐसी बात भी नहीं जिस प्रकार इस देह में कुमार, युवा और युवावस्था होती है, उसी प्रकार इस आत्मा को दूसरी देह प्राप्त होती है।"

आर्ष मान्यताओं की पुष्टि अब अनेक वैज्ञानिकों द्वारा की जा रही है। आत्मा अविनाशी है, सनातन है। वह न कभी नष्ट होगी और न उसका क्षय होगा। अपने चिंतन में हर पल इस मान्यता को जड़ जमाकर बैठा रखना ही आस्तिकता के तत्त्वदर्शन को जीवन में उतारना है।

एक सचाई, जिसे नकारा नहीं जा सकता

परामनोविज्ञान के आधुनिक अनुसंधानों के क्रम में ऐसे अनेक प्रमाण एकत्रित किए गए हैं जिनसे मनुष्यों की पूर्वजन्म की स्मृति होने के प्रमाण मिलते हैं। ऐसे अन्वेषणों में प्रो० राइन की खोजें बहुत विस्तृत और प्रामाणिक मानी गई हैं, उनके आधार पर अन्यत्र भी इस दिशा में बहुत-सी जाँच-पड़ताल हुई है। इस खोज-बीन के निष्कर्ष इस मान्यता का पलड़ा भारी करते हैं कि आत्मा का अस्तित्व मरने के बाद भी बना रहता है और वह पुनर्जन्म धारण करती है। हिंदू धर्म में आत्मा की अमरता एवं पुनर्जन्म की सुनिश्चितता को आरंभ से ही मान्यता प्राप्त है, किंतु संसार में दो प्रमुख धर्मों—ईसाई और इस्लामी धर्मों के बारे में ऐसी बात नहीं है, उनमें मरणोत्तर जीवन का अस्तित्व तो माना जाता है, पर कहा जाता है कि वह

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
प्रसुप्त स्थिति में बना रहता है। किंतु अब मिल रहे प्रमाणों से यह कट्टर मान्यता क्रमशः कम होती जा रही है। विज्ञान और बुद्धिवाद के समन्वय ने यह नई दृष्टि दी है। अस्तु, पाश्चात्य देशों में तथ्यों पर ध्यान देने की प्रवृत्ति से पुनर्जन्म के संबंध में भी जाँच-पड़ताल करने पर जो तथ्य सामने आए, उन पर विचार करने के संबंध में उत्साह उत्पन्न हुआ है।

१९वीं शताब्दी में यूरोप में सबसे पहली किताब फ्रेडरिक स्पेन्सर ओलीवर द्वारा लिखित 'एन अर्थ ड्वेलर्स रिटर्न' थी जिसमें उसने अपने पिछले ४२ जन्मों का हाल लिखा था। उसका कथन था—"यह पुस्तक उसने नहीं लिखी किंतु किसी दिव्यात्मा ने उसके शरीर में प्रवेश करके लिखाई है।" इस पुस्तक के पीछे तर्क और प्रमाण न होने से उसे विश्वस्त तो नहीं माना गया, पर जब उसमें की गई भविष्यवाणियों में से कितनी ही सही सिद्ध हुईं, तो वह बहुचर्चित अवश्य बन गई।

इसके बाद मनोविज्ञान और चिकित्साशास्त्र में समान रूप से ख्याति प्राप्त डॉ० जीना सरमी नारा द्वारा लिखित 'मैनो मेंशन' का नंबर आता है, जिसमें ऐसे कितने ही आधार प्रस्तुत किए गए हैं, जिनसे शरीर न रहने पर भी आत्मा का अस्तित्व बना रहने तथा फिर से जन्म होने की बात पर विश्वास जमता है।

अमेरिका के कैंटकी प्रांत में होपकिन्स विले नामक व्यक्ति देहात में हुआ। वह अपने अन्य परिवारियों की भाँति नाममात्र को ही शिक्षित था। उसे सम्मोहन विद्या से वास्ता पड़ा। वह उस तंद्रा में ऐसी बातें करने लगा जिन्हें अतींद्रिय अनुभूतियों की संज्ञा मिलने लगी। आरंभिक दिनों में वह रोगियों के कष्ट, निदान एवं उपचार के संबंध में तंद्रित स्थिति में परामर्श देता था, जो लाभदायक सिद्ध होते

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

थे। फिर उसमें पिछले जन्मों का हाल बताने की नई क्षमता जागी। उसने सैकड़ों के पूर्वजन्मों के विवरण बताए और वे सभी ऐसे थे, जो तलाश करने पर सही प्रमाणित हुए। इन प्रमाणों की साक्षी कहाँ से प्राप्त की जाए? इस संदर्भ में उसने अनेकों सरकारी और गैर सरकारी कागजों में दर्ज ऐसे पुराने विवरण बताए, जिनका साधारण रीति से पता लगाना अति कठिन था। साक्षी रूप में वे ढूँढ़े गए तो जैसा कि उल्लेख बताया गया था, ठीक उसी रूप में उसी तरह वह सब मिल गया।

इसी प्रकार उसने ऐसे विवरण भी बताए, जिनमें पुराने जन्मों के दुष्कर्मों का फल इस जन्म में मिलने के सिद्धांत की प्रामाणिकता सिद्ध होती है। इन कष्ट–पीड़ितों में अधिकांश विकलांग एवं रोगी थे। उन्हें यह विपत्ति किस कारण उठानी पड़ रही है? इसके संदर्भ में विवरण बताए गए, वे भी उस कथन की पुष्टि के लिए सबल साक्षी थे। इनकी प्रामाणिकता भी बताए घटनाक्रम के साथ भली प्रकार खोजी गई और जो बताया गया था, वह सही मिला। इस प्रकार होपकिन्स विले रोगों की चिकित्सा–पूर्व जन्म और कर्मफल के तीन तथ्यों पर ऐसे रहस्यमय प्रकाश डालता रहा, जो इससे पूर्व इतनी अच्छी तरह कभी भी सामने नहीं आए थे।

सम्मोहन विद्या के उपयोग द्वारा पुनर्जन्म सिद्धांत की प्रामाणिकता को पुष्ट करने वाले ऐसे ही एक व्यक्ति और हुए हैं। उनका नाम था कर्नल डिरोचाज। दिसंबर १९०४ का एक दिन, एक फ्रांसीसी इंजीनियर के घर खचाखच भीड़ से भरे वातावरण में अधेड़ आयु के व्यक्ति कर्नल डिरोचाज ने प्रवेश किया। कर्नल को देखते ही लोगों में खामोशी छा गई। एक सर्वथा विचित्र प्रयोग था। ये लोग पुनर्जन्म के प्रमाण देखने उपस्थित हुए थे। कर्नल ने इंजीनियर की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

लड़की मेरी मेव को स्वच्छ आसन पर बैठाया, उसकी दृष्टि में अपनी
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
दृष्टि डालकर वे कुछ क्षणों तक एकटक देखते रहे, थोड़ी ही देर में लड़की की बाह्य चेतना शून्य हो चली, कर्नल ने उसे अहिस्ता से लिटा दिया और उसकी देह को हलकी काली चादर से ढक दिया।

देवयोग से कर्नल डिरोचाज ने भारतीय दर्शन की इस मीमांसा की अनुभूति कर ली थी। वे मैस्मेरिज्म के सिद्ध थे और इस विद्या द्वारा जीवन के गूढ़ रहस्यों का पता लगाने में सफल हुए थे। उन्होंने न केवल फ्रांस वरन सारे यूरोप को यह बताया था कि जीवन के बारे में पाश्चात्य मान्यता भ्रामक और त्रुटिपूर्ण है। हमें इस संबंध में अंततः भारतीय दर्शन की ही शरण लेनी पड़ेगी। अपने इस कथन को प्रमाणित करने के लिए ही वे यह प्रयोग कर रहे थे। उस प्रयोग को देखने के लिए फ्रांस के बड़े शिक्षाविद और वैज्ञानिक भी उपस्थित थे।

मेरी मेव के पिता सीरिया में इंजीनियर थे। मेरी प्रतिभाशाली लड़की थी। मैस्मेरिज्म द्वारा उसे अचेत कर लिटा देने के बाद कर्नल साहब ने उपस्थित लोगों की ओर देखकर कहा—"अब मेरा इस लड़की के सूक्ष्मशरीर पर अधिकार है। मैं इसे काल और ब्रह्मांड की गहराइयों तक ले जाने और वहाँ के सूक्ष्म रहस्यों का ज्ञान करा लाने में समर्थ हूँ।"

किसी जमाने में भारत में प्राणविद्या के आधार पर प्राणों द्वारा आरोग्य प्रदान करने, गुप्त रहस्य ढूँढ़ने के प्रयोग हुआ करते थे। कर्नल डिरोचाज का यह प्रयोग भारतीय सिद्धांतों का प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह अनेक विलायती पत्रों में छपा था। पीछे इसे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने मासिक 'सरस्वती' में छपाया था। उसी से यह घटना आध्यात्मिकी पुस्तक के लिए उद्धृत की गई। यह पुस्तक इंडियन प्रेस लि० प्रयाग से प्रकाशित हुई थी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर्नल डिरोचाज अब प्रयोग के लिए तैयार थे। उन्होंने मेरी मेव को संबोधित कर पहला प्रश्न किया—"अब तुम्हें कैसा अनुभव हो रहा है, क्या दिख रहा है।" प्राणपाश में बद्ध अचेतन कन्या ने उत्तर दिया—"मैं नीले और लाल रंग की छाया देख रही हूँ। यह प्रकाश मेरे भौतिक शरीर से अलग हो रहा है और मैं अनुभव कर रही हूँ कि मैं शरीर नहीं, प्रकाश जैसी कोई वस्तु हूँ, अब मैं अपने शरीर से एक गज के फासले पर स्थित हूँ। पर जिस तरह विद्युत कण एक रेडियो और रेडियो स्टेशन से संबंध किए रहते हैं, उसी प्रकार मेरा यह शरीर एक रस्सी की तरह पार्थिव शरीर से बँधा हुआ है। मेरे इस रंगीन प्रकाश शरीर के भीतर दिव्य ज्योति परिलक्षित हो रही है, मैं यही तो आत्मा हूँ।"

कर्नल ध्यानावस्थित हो गए। उन्होंने कहा—"मेव तुम अपनी वर्तमान आयु से कम आयु की ओर चलो और क्रमशः छोटी आयु की ओर चलते हुए यह बताओ कि तुम इस शरीर में आने के पूर्व कहाँ थीं ? कौन थीं ?"

कर्नल के प्रश्न बड़े विचित्र लग रहे थे, पर उनमें एक अदृश्य सत्य झाँक रहा था, उपस्थित जनसमुदाय स्तब्ध बैठा सारी गतिविधियों को देख-सुन रहा था। जब यह प्रयोग हो रहा था, मेरी मेव १८ वर्ष की थी। अब वह बोली—"मैं १६ वर्ष की आयु के दृश्य देख रही हूँ, अब १४, अब १२ और अब १० की आयु के चित्र मेरे सामने हैं। इस समय मैं मारसेल्स में हूँ। अपने पति के साथ एक विस्तृत जीवन के दृश्य मेरे सामने हैं। अब मैं क्रमशः छोटी होती जा रही हूँ।" फिर वह कुछ देर तक चुप रही। फिर बताना प्रारंभ किया। अभी-अभी मैं एक वर्ष की थी बोल नहीं पाई। अब मैं अपने पूर्वजन्म के शरीर में हूँ। इस शरीर से निकलने के बाद मुझे किसी अज्ञात प्रेरणा ने 'मेरी मेव' के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

शरीर में पहुँचा दिया था—अब मैं पहले जन्म के शरीर में छोटी हो रही
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
हूँ और देख रही हूँ कि यह ग्रेट ब्रिटेन का समुद्री तट है, मैं एक मछुए की लड़की हूँ। मेरा नाम 'लीना' था। २० वर्ष की आयु में मेरी शादी हुई। मेरी एक कन्या हुई। वह दो वर्ष की आयु में मर गई। मेरा पति मछलियाँ मारता था। उसके पास एक छोटा-सा जहाज था, वह समुद्री तूफान में नष्ट हो गया, उसी में पति की मृत्यु हो गई, मैं बहुत दुखी हूँ, मैं भी समुद्र में डूबकर मर गई हूँ, मछलियों ने मेरा शरीर खाया, मैं वह सब देख रही हूँ। इस सूक्ष्मशरीर में मैंने वैसी ही अनेक आत्माएँ देखीं, मैंने कुछ बात भी करनी चाही, पर मेरी बात ही किसी ने नहीं सुनी, मैं पति और बच्चे की याद में भटकती फिरी। वे मुझे मिले नहीं। हाँ, एक नया शरीर अवश्य मिल गया।" यहाँ तक जो कुछ मेरी ने बताया, पीछे जाँच करने पर वह प्रामाणिक तथ्य निकला।

ऐसी ही एक घटना का विवरण एक रूसी विचारक ने दिया है। बात उन दिनों की है, जब रूस में क्रांति मच रही थी। वहाँ के डेनियल वेवरेस्की नामक प्रसिद्ध विचारक उन दिनों चीन में एक लामा के बारे में उत्सुक थे। उन्होंने सुन रखा था कि वह किसी भी भूतकालीन घटनाओं को स्वप्न में दिखा देने की क्षमता रखता है।

श्री वेवरेस्की उस तांत्रिक से एक बौद्ध मंदिर में मिले और उस तरह का प्रयोग देखने की इच्छा प्रकट की। लामा ने एक नवयुवक पर प्रयोग करके दिखाया। योग निद्रा द्वारा स्वप्न की अनुभूति कराने के बाद लामा ने पाल नामक इस युवक से पूछा—"तुमने क्या देखा?" उसने बताया—"मैंने देखा कि मैं रूस के सेंट पीटर्स वर्ग नगर में हूँ। मेरी प्रेमिका एक बड़े शीशे के सामने खड़ी श्रृंगार कर रही है। उसे उसकी दासियाँ 'क्रॉस ऑफ अलेक्जेंडर' हीरे की अँगूठियाँ पहना रही हैं, मैंने मना किया कि तुम यह अँगूठी मत पहनो। मैंने सारी बात-चीत

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रूसी भाषा में ही की। अपनी प्रेमिका से मिलन तक का स्वप्न बड़ा ही मधुर रहा। तभी एक दूसरा स्वप्न भी दिखाई दिया। मैंने अपने आप को एक परिवर्तित दृश्य में निर्जन रेगिस्तान में पाया। मेरे दो बच्चे भूख से तड़प रहे हैं, पर मैं उनके लिए भोजन नहीं जुटा पाया। मुझे एक ऊँट ने हाथ में काट लिया मेरा अंत बड़ी दुःखद स्थिति में हुआ।

अपने सम्मुख यह घटना देखने के बाद डॉ० बेवरेस्की रूस लौटे। देवयोग से एक बार सेंटपीटर्स में उनकी भेंट एक स्त्री से हुई। उससे इस बात का क्रम चल पड़ा, तो वह एकाएक चौंकी और बोली—"आप जिस महल की बातें बता रहे हैं, वह मेरा ही मकान है। मेरे पास 'क्रॉस ऑफ एलेक्जेंडर' हीरे की अँगूठी भी थी। मैंने उसे कई बार पहनना चाहा, किंतु मेरा प्रेमी रास्पुटिन इसे पसंद नहीं करता था। ठीक जिस प्रकार आपने पाल की घटना सुनाई, वह मुझे यह अँगूठी पहनने से रोकता था।"

डॉ० वेवरेस्की उस स्त्री के साथ उसके घर गए। हूबहू वही दृश्य जो स्वप्न में देखकर पाल ने बताए थे। वे आश्चर्यचकित रह गए और माना कि स्वप्न सत्य था तथा यह भी कि जीवात्मा के पुनर्जन्म का सिद्धांत मिथ्या नहीं है। वे सहारा जाकर दूसरी घटना की भी जाँच करना चाहते थे, पर कोई सूत्र न मिल पाने से वे निराश रह गए। पर सत्य था कि उनको जितनी भी जानकारियाँ मिलीं उन्होंने इन मान्यताओं का समर्थन ही किया। इन घटनाओं का उल्लेख प्रो० वेवरेस्की ने अपने ग्रंथ 'दि मेकर ऑफ हेवनली ट्रेजर्स' में किया है।

गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं—

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप॥

—अध्याय ४/५

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

"अर्जुन मेरे और तुम्हारे अनेक जन्म बीत गए हैं। ईश्वर होकर मैं उन सबको जानता हूँ, परंतु हे परंतप ! तू उसे नहीं जान सका।"

थियोसाफी के जन्मदाताओं में से एक सर ओलिवर लाज ने लिखा है—"जीवित और मृतभेद स्थूल जगत तक ही सीमित है। सूक्ष्मजगत में सभी जीवित हैं। मरने के बाद आत्मा का अस्तित्व समाप्त नहीं हो जाता। जिस प्रकार हम जीवित लोग परस्पर विचार-विनिमय करते हैं, उसी प्रकार जीवित और मृतकों के बीच में आदान-प्रदान हो सकना संभव है। हमें विज्ञान के इस नए क्षेत्र में प्रवेश करना चाहिए और एक ऐसी दुनिया के साथ संपर्क बनाना चाहिए, ताकि हम विश्व-परिवार को कहीं अधिक सुविस्तृत, सुखी और प्रगतिशील बना सकें।"

सर आर्थर कानन डायल भी इसी विचार के थे। वे कहते थे कि अपनी दुनिया की ही तरह एक और सचेतन दुनिया है, जिसके निवासी न केवल हमसे अधिक बुद्धिमान हैं, वरन शुभ चिंतक भी हैं। इन दोनों संसारों के बीच यदि आदान-प्रदान का मार्ग खुल सके, तो इसमें स्नेह-संवेदनाओं का सुखद सहयोग का एक नया अध्याय प्रारंभ होगा। मृतकों और जीवितों के बीच संपर्क स्थापना का प्रयास यदि अधिक सच्चे मन से किया जा सके, तो अब तक की प्राप्ति वैज्ञानिक उपलब्धियों से कम नहीं, वरन बड़ी सफलता ही मानी जाएगी तथा यह भारतीय प्रतिपादन पुष्ट हो जाएगा कि जन्म और मृत्यु मात्र स्थूल जगत की घटनाएँ हैं। "**न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं**" आत्मा न कभी जन्म लेती है और न कभी मरती है। यह कथन सत्य है एवं जीवन में उतारने योग्य भी।

□

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

नियंता की कर्मफल व्यवस्था

मानव जीवन विचित्रताओं का ऐसा एक समुच्चय है जिसे देखकर कारण समझ न पड़ने पर हतप्रभ होकर रह जाना पड़ता है। ऐसी अनेकों अनबूझ पहेलियाँ जन्म से मरण तक मनुष्य के पल्ले बँधती रहती हैं। सामान्य बुद्धि उन्हें समझ नहीं पाती। समझ नहीं आता कि एक-सी परिस्थितियाँ, समान साधन होते हुए भी एक ही माता-पिता की दो संतानें भिन्न प्रकृति की क्योंकर विकसित होती चली जाती हैं। बौद्धिक दृष्टि से एक अत्यंत विकसित पाया जाता है तो एक मंदबुद्धि होता देखा जाता है। एक भाव-संवेदना की दृष्टि से कोमल हृदय का तो दूसरा निष्ठुर प्रकृति का देखा जाता है। एक कायर-भीरू मनःस्थिति का बन जाता है तो एक निडर, साहसी, संतुलित मनःस्थिति का।

वर्तमान में मनुष्य जीवन के विकास के हर घटनाक्रम को मनीषियों ने पूर्वजन्म के प्रयासों की फलश्रुति माना है। भारतीय अध्यात्म का मर्म समझकर मंतव्य व्यक्त करने वाले दार्शनिकों का मत है कि कर्मों के सूक्ष्म संस्कार जीवात्मा के साथ मरणोपरांत भी बने रहते हैं। इन्हीं संस्कारों को बाद के जन्मों में विकसित होते देखा जा सकता है। वे ही जन्मजात विशेषताओं के रूप में प्रकट होते हैं। मनुष्य की प्रकृतिगत विशिष्टताओं के गठन में आनुवंशिक कारणों का जितना योगदान होता है, उससे कम पूर्वजन्मों के अर्जित सूक्ष्म संस्कारों का नहीं होता। जन्मजात प्रतिभा के उदाहरण उसी सत्य के प्रमाण, विशिष्टताएँ, जिनकी संगति न तो आनुवंशिक कारणों से बैठती है, न शैक्षणिक प्रयासों से और न ही बाह्य परिस्थितियों के प्रभाव से, वे भी वस्तुतः सूक्ष्म संस्कारों की ही प्रतिक्रियाएँ होती हैं, जो स्वभाव का अंग बनी रहती हैं। व्यवहारविज्ञानी, मनःशास्त्री स्वभावगत इन विशेषताओं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

का कारण जब वातावरण में पैतृक गुणों में ढूँढने का प्रयास करते हैं, तो कितनी ही बार असफलता हाथ लगती है।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जन्म के साथ ही कितनों को अनुकूल परिस्थितियाँ अनायास ही मिल जाती हैं। बिना किसी पुरुषार्थ के वे संपदा और वैभव के मालिक बन जाते हैं। विकसित होने के लिए कुछ को परिवार का सुसंस्कृत वातावरण मिल जाता है। जबकि कुछ को घोर प्रतिकूलताओं का सामना करना पड़ता है। सर्वांगीण विकास के लिए अभीष्ट स्तर के साधन एवं सहयोग नहीं जुट पाते। उनका अपना पुरुषार्थ ही आगे बढ़ने का एकमात्र संबल होता है। अपंगता एवं विकलांगता के शिकार बच्चे भी पैदा होते हैं। जिन मासूमों ने जीवन का एक भी वसंत न देखा हो, जिन्हें पाप-पुण्य का, भले-बुरे का कुछ भी ज्ञान नहीं होता, उन्हें अकारण ही प्रकृति के कोप का भाजन बनना पड़े, यह बात तर्कसंगत नहीं उतरती। लेकिन नियम एवं व्यवस्था जड़ प्रकृति में भी दिखाई पड़ती है, तो कोई कारण नहीं कि चेतन जगत पर लागू न हों। जन्मजात विकलांगता, दुर्घटना में मृत्यु, विषम परिस्थितियों में भी बच निकलने का कारण सामान्य बुद्धि समझ नहीं पाती। उसे मात्र संयोग मान लेने से समाधान नहीं हो पाता। संयोग हो तो भी उसका कुछ आधार होना चाहिए।

कर्मफल सिद्धांत की आध्यात्मिक मान्यता में उपर्युक्त गुत्थियों का हल सन्निहित है। पेड़-पादपों की तरह जीवन का भी शरीर के साथ ही अंत नहीं हो जाता। आदि और अंत से रहित वह सतत नए जीवन की पृष्ठभूमि में सन्निहित है। जीवात्मा का वह एक पड़ाव है जहाँ से नई तैयारी, नई उमंग के साथ एक नए जीवन की शुरुआत होती है। कर्मों के सूक्ष्म संस्कार उसके साथ चलते हैं। उन्हीं के आधार पर अगले जीवन की भली-बुरी परिस्थितियाँ जीवात्मा उपलब्ध करती है। जन्मजात प्रकट होने वाली भली-बुरी विशेषताएँ पूर्व

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

जन्मों के कर्मों की ही प्रतिफल होती हैं, जो अचानक ही प्रत्यक्ष होती दिखाई पड़ती हैं। कर्मों का प्रतिफल तत्काल इसी जीवन में मिले, यह आवश्यक नहीं। कर्मों का फल पकने तथा मिलने की सुव्यवस्था होते हुए भी वह अविज्ञात है। कर्मफल की स्वचालित व्यवस्था एक रहस्य होते हुए भी इस सत्य पर प्रकाश डालती ही है कि अच्छे-बुरे कर्मों का फल मिलना सुनिश्चित है। कब और कितने परिमाण में यह उस सत्ता ने अपने हाथों में रख छोड़ा है।

गंभीरता से विचार करने पर स्रष्टा की इस कर्मफल व्यवस्था में उसकी दूरदर्शिता का ही आभास होता है। जड़ जगत के विकास एवं मरण के सुनिश्चित तथा ज्ञातक्रम में किसी प्रकार का कुतूहल नहीं होता। ढर्रे की भाँति सब कुछ चलता जान पड़ता है। पेड़, पादप पैदा और समाप्त होते रहते हैं। जीव-जंतुओं का भी जीवन सतत ढर्रे की प्रक्रिया से लुढ़कता रहता है। परमात्मा ने मनुष्य को भी उन्हीं की स्थिति में रखा होता, तो मानव जीवन का कुछ विशेष महत्त्व नहीं रह जाता। बुद्धि और पुरुषार्थ को अपना जौहर दिखाने का अवसर नहीं मिल पाता। चोरी करते ही अपंग हो जाने, झूठ बोलते ही जीभ के गल जाने, व्यभिचार करते ही कोढ़ हो जाने, हत्या करते ही अकस्मात मर जाने की कर्मफल व्यवस्था रही होती, तो मनुष्य की स्वतंत्रता एवं कार्य-कुशलता का कुछ महत्त्व नहीं रह जाता। सब कुछ यंत्रवत चलता। कुछ विशेष सोचने तथा विशेष करने की उमंग नहीं रहती। भविष्य की जानकारी होने पर जीवनक्रम नीरस ही नहीं, भी होता। चारों ओर अकर्मण्यता छा जाती। सचमुच ही उस नियामक सत्ता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना चाहिए। जिसने कर्मफल व्यवस्था को अगणित जन्म शृंखलाओं के साथ जोड़कर मानवी विवेक को अपने वर्चस्व का परिचय देने का स्वतंत्र अवसर प्रदान किया है।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर्म का उचित न्याय देने में समाजगत व्यवस्था में अंधेरगर्दी चल भी सकती है, पर ईश्वरीय व्यवस्था में ऐसा कभी संभव नहीं है। उसकी त्रिकालदर्शी आँखों से कुछ भी नहीं छिप सकता। कर्मों का फल मिलना सुनिश्चित है, अच्छे-का-अच्छा और बुरे-का-बुरा। संभव है, कोई व्यक्ति समाज एवं न्याय की आँखों में धूल झोंककर अपने कुकर्मों तथा पापों का दंड पाने से बच जाए, पर ईश्वरीय न्याय विधान से बचना संभव नहीं है। संभव है, उसका फल इस जीवन में मिले-न-मिले, पर दूसरे जन्मों में मिलना सुनिश्चित है।

इस तथ्य पर योगदर्शन स्पष्ट प्रकाश डालता है। योगदर्शन साधन पाद सूत्र १३ में उल्लेख है—"**सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः।**"

"कर्म का मूल रहने पर जब वह पकता है, तो जाति या जन्म, आयु और भोग के रूप में प्रकट होता है।" यह जन्म, आयु और भोग, पुण्य और पाप की अपेक्षा से सुख और दुःख रूपी फल वाले होते हैं।

कर्मफल सिद्धांत को और भी स्पष्ट करने के लिए प्राचीन ऋषियों ने कर्मों को तीन भागों में बाँटा है—संचित, क्रियमाण और प्रारब्ध। वह कर्म जो अभी फल नहीं दे रहे हैं—बिना फलित हुए इकट्ठे हो जाते हैं, उनको संचित कर्म कहते हैं। कालांतर में वे फल देने के लिए सुरक्षित रखे हुए हैं। उन्हें फिक्स्ड डिपाजिट की संज्ञा दी जा सकती है। पर समस्त संचित कर्म भी एक जैसे नहीं होते, न ही उनका फल एक ही समय में मिलता है। विभिन्न प्रकार के संचित कर्मों के पकने की अवधि अलग-अलग हो सकती है।

इसी प्रकार जो कर्म वर्तमान में किया जाता है, वह क्रियमाण है। संचित कर्मों में से जिनका विपाक हो जाता है अर्थात् जो पककर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

फल देने लगते हैं, उनको प्रारब्ध कहते हैं। जन्म के साथ अनायास भली–बुरी परिस्थितियाँ लिए अथवा जीवन में अकस्मात उपलब्धियाँ लिए वे ही प्रकट होते हैं। कर्मों की शृंखला इस प्रकार है—क्रियमाण कर्म का अंत संचित में हो जाता है और संचित में जो कर्मफल देने लगते हैं, उनको प्रारब्ध कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मनुष्य का अधिकार क्रियमाण कर्मों पर है। संचित और प्रारब्ध उसकी ही उपलब्धियाँ हैं, जिन पर मनुष्य का कोई अधिकार नहीं। भले–बुरे कर्मों को वर्तमान में करने–न–करने की मनुष्य को पूरी–पूरी छूट तो है, पर वह स्वतंत्रता फल पाने में नहीं है। **"अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्"** किए गए शुभ–अशुभ कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। कर्मफल सिद्धांत का यह प्रमुख सूत्र है।

स्वर्ग, नरक एवं कर्मफल

कर्मफल व्यवस्था के मूलभूत सूत्रों को भली भाँति समझ लेने के बाद स्वर्ग, नरक संबंधी लोकमान्यता का भी स्पष्टीकरण संभव है। जनमानस में यह स्वर्ग के ऊपर आकाश में एवं नरक के नीचे पाताल में होने की मान्यता संव्याप्त है। इस संदर्भ में वैज्ञानिक जाँच–पड़ताल निराशा उत्पन्न करती व अविश्वास बढ़ाती है। क्या स्वर्ग–नरक की मान्यता गलत है ? ऐसा नहीं कहना चाहिए, क्योंकि कर्मफल को किसी–न–किसी रूप में दर्शन ने स्वीकार किया है। मूल तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि बुरे कर्मों का प्रतिफल दुःख और सत्कर्मों की परिणति सुख के रूप में होती है। यह कार्य परलोक में चित्रगुप्त द्वारा किया हुआ बताया जाता है। प्रश्न केवल इस पौराणिक प्रसंग के तर्कसम्मत स्पष्टीकरण का रह जाता है। कौन है यह चित्रगुप्त एवं यह किस माध्यम से दुःख–सुख की व्यक्ति को अनुभूति कराता है ?

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

यह चित्रगुप्त, अपना ही गुप्त चित्र अचेतन मन है। इसमें अन्याय कृत्य करते रहने के लिए यह विशेषता भी है कि क्रिया की प्रतिक्रिया उत्पन्न करके स्वसंचालित पद्धति के अनुसार दंड-पुरस्कार की व्यवस्था भी करता रहे। हम स्वयं ही आग छूते और स्वयं ही जलन अनुभव करते हैं। विष खाते और मरते हैं। विद्या पढ़ते और श्रेय पाते हैं। कुकर्म करते और आत्मप्रताड़ना भुगतते हैं। इसके लिए किसी अन्य मध्यस्थ की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी प्रकार शुभ-अशुभ कर्मों का भला-बुरा प्रतिफल पाने के लिए अपने भीतर ही ऐसा तंत्र विद्यमान है, जो समुचित दंड-पुरस्कार की व्यवस्था करता रहे। देर-सबेर में जीवित स्थिति में भी यह प्रतिफल प्राप्त होते हैं और मरणोत्तर जीवन में भी वहाँ की परिस्थितियों के अनुसार ऐसी व्यवस्था हो सकती है, जिसमें कि पाप-पुण्य के फलस्वरूप उपलब्ध होने वाली प्रतिक्रियाओं की भली-बुरी अनुभूति का कोई-न-कोई क्रम चलता रहे।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वर्ग-नरक की मूल स्थापना कर्मफल की सुनिश्चितता प्रकट करने के लिए की गई है। वर्णनों के साथ जुड़े हुए घटनाक्रमों में जो विसंगतियाँ हैं, उन पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं। यह धर्म दर्शन के प्रवक्ताओं ने सामान्य जनों को उनकी अभ्यस्त अनुभूतियों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए निर्धारित की है। जिन देशों में जिन क्षेत्रों में, जिन समुदायों में सुख-दुःख की अनुभूति जिस स्तर की होती है, उन्हीं को स्मरण दिलाते हुए स्वर्ग-नरक का वर्णन किया गया है। यही कारण है कि संसार के विभिन्न भागों में इस संदर्भ में जो वर्णन किए गए हैं, उनके बीच अंतर पाया जाता है। इतने पर भी फल तथ्य जहाँ-का-तहाँ रहता है। अशुभ कर्मों का फल दुःखदायक और सत्कर्मों की प्रतिक्रिया सुख-संतोष से भरी-पूरी होनी चाहिए, यह स्थापना हर दृष्टि से सही है। इस विश्वास के उपरांत स्वर्ग-

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

नरक के चित्र-विचित्र वर्णन भी कोई असमंजस उत्पन्न नहीं करते, वरन स्थानीय परिस्थितियों के साथ तालमेल बैठाने की उन प्रतिपादन-कर्त्ताओं की सूझ-बूझ की प्रशंसा ही करते हैं।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पौराणिक दृष्टि से विभिन्न धर्म संप्रदायों में स्वर्ग-नरक संबंधी अपनी-अपनी मान्यताएँ हैं। श्रीमद्भागवत में २८ नरकों का वर्णन है, जो पृथ्वी से नीचे किंतु पानी के ऊपर हैं। गरुड़ पुराण में नरकों का इतना विस्तृत वर्णन है मानो उनमें किसी समूचे ग्रह-नक्षत्र जितना बड़ा क्षेत्र हो और उसके असंख्यों कर्मचारी उसी उत्पीड़न प्रक्रिया में निरत रहते हों। हिंदू धर्मानुयायी दक्षिण दिशा में नरक बताते हैं, किंतु पारसियों का उत्तर में है। मुसलमानों के दोजख में आग की लपटें उठती रहती हैं, जबकि ईसाइयों के यमदूत त्रिशूलधारी दानवों के रूप में मार-काट मचाते रहते हैं।

जापानियों के नरक में बाराह बिरादरी के घिनौने प्राणियों की भरमार है, तो यूनानियों की 'स्टिक्स' नदी, हिंदुओं की वैतरणी के समान ही सड़े पानी और काटने वाले कीड़ों से भरी है। अंतर इतना ही है कि हिंदुओं को गाय की पूँछ पकड़कर पार होने की सुविधा है और यूनानियों के मुरदे जितना पैसा मरते समय मुँह में दाबकर ले जाते हैं, उतने ही टैक्स से घटिया जलपान प्राप्त करते हैं। दोनों ही मान्यताओं में वह गौ या मुरदे की राशि पुरोहितों के घर पहुँचती है।

स्वर्ग के संबंध में एक मत इतना ही है कि वहाँ सुख-साधनों की कमी नहीं, पर वे साधन हैं किस प्रकार के, इस संबंध में ऐसे वर्णन हैं, जो एकदूसरे से तालमेल नहीं खाते। यूनानी भी ईसाइयों की तरह ही सात स्वर्ग मानते हैं। मुसलमानों का खुदा भी सबसे ऊँचे स्वर्ग सातवें आसमान पर अवस्थित है। प्रायः प्रशांत महासागर की सीध में बहुत ऊँचाई पर यूनानियों का स्वर्ग है, जिसमें हिंदुओं के नंदन वन जैसा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

मीठे फलों वाला एक विशाल एवं रमणीक उद्यान है। स्कैंडीनेविया
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
का एस गार्ड विशाल भवन ही स्वर्ग है। इस महल के ४५० दरवाजे हैं। चीनियों का 'यांग' सुनहरे प्रकाश और सुख-सुविधाओं से भरा-पूरा है। जापान के स्वर्ग में स्वर्ण पर्वत पर भगवान बुद्ध भव्य कमलासन पर विराजमान हैं। चारों ओर संत विराजमान हैं। स्वर्ग यात्री भी उन्हीं की पंक्ति में जा बैठता है और ज्ञानामृत का पान करता है। वेदकाल की मान्यताओं में कामधेनु गौ और कल्पवृक्ष के माध्यम से स्वर्ग पाए व्यक्ति सभी अभीष्ट सुविधाएँ प्राप्त करते हैं।

मध्यकाल में सामंती विलासिता ने युद्धोन्माद को जन्म दिया था। इसके लिए कटने-काटने वाले योद्धाओं की आवश्यकता पड़ती थी। उन्हें लूट-पाट में हिस्सा और मोटा वेतन तो मिलता ही था, पर इसके अतिरिक्त स्वर्ग में उन सुविधाओं का बाहुल्य भी दरसाना पड़ता था, जिनके लिए वे लालायित रहते हैं। ऐसे प्रलोभनों में धन-संपदा के उपरांत कामुकता की तृप्ति ही बड़ा आकर्षण रह जाता है।

इसीलिए युद्ध में मरने वालों को स्वर्ग मिलने के आकर्षण का पूरा-पूरा लालच दिखाया गया है। इंद्रलोक में परियों की भरमार है, जो वीर गति पाने वाले सभी योद्धाओं की मनोकामना पूर्ण करने के लिए हर घड़ी उत्सुक आतुर रहती हैं। सात्तारों का मिलना और शराब की नहर से हर घड़ी सुरापान करने का चित्रण भी उसी मनोवृत्ति का परिचायक है।

मरने के बाद किसी स्थान विशेष पर पहुँचकर सुख-दुःख की उपलब्धि के संबंध में आस्तिक परामनोविज्ञानियों का मत है कि लंबे समय तक दिन-रात श्रम में संलग्न रहने के उपरांत मृतात्मा को कुछ समय विश्राम की आवश्यकता पड़ती है। श्रम के साथ विश्राम का अविच्छिन्न संबंध है। एक के बिना दूसरे की गति नहीं। दिन-रात की तरह यह चक्र सर्वत्र चलता है। जन्म

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
और मरण के मध्य भी कुछ ऐसा ही अवकाश समय मिलता है जैसा कि सरकारी कर्मचारियों की बदली होते समय कुछ समय का अवकाश मिलने का अवसर रहता है। मृतात्मा अनंत-अंतरिक्ष में अपनी भारहीन स्थिति में किसी अनुकूल स्थान पर गहरी तंद्रा में चला जाता है और प्रगाढ़ निद्रा में विश्राम-लाभ करता है। इस अवधि में उसे भले-बुरे स्वप्न भी आते हैं। दैनिक जीवन में भी निद्रा सर्वथा स्वप्न रहित नहीं होती, उसका प्रायः आधा समय स्वप्नावस्था में व्यतीत होता है। उद्विग्न दिनचर्या में निरत रहने वालों के सपने भी भयानक एवं असंतोषजनक होते हैं, जबकि शांत और प्रसन्न दिनचर्या बिताने वालों के सपने भी सुरुचि और प्रसन्नता के माध्यम बनते हैं। ठीक इसी प्रकार मृतात्मा को मरणोत्तर जीवन के विश्रामकाल में ऐसी भली-बुरी अनुभूतियाँ होती हैं, जिन्हें स्वर्ग या नरक कहा जा सके। मरणोत्तर काल की विश्राम वेला में ऐसी स्वप्न-शृंखला चलती रहती है, जिसमें भली या बुरी सुखद कष्टकारक अनुभूतियों का अवसर मिलता रहे।

प्रत्यक्षवादियों ने पूर्वजन्म के भले-बुरे कर्मों का प्रतिफल जन्मजात अपंगताओं एवं प्रतिभाओं के रूप में प्रतिपादित किया है। वे कहते हैं कि कितने ही लोग अपने जन्मकाल से ही कुछ असामान्य प्रकृति साथ लेकर आते हैं। इनमें विलक्षण मेधावानों के, कलाकारों के उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं, जो बिना प्रशिक्षण एवं वातावरण के भी ऐसी प्रतिभा का परिचय देने लगे, जिनकी प्रस्तुत परिस्थितियों के साथ कोई संगति नहीं बैठती। वंशानुक्रम, सुविधा-साधन, सहयोग, अवसर आदि के आधार पर ही आमतौर से किसी की विशेष प्रतिभा या प्रगति का तारतम्य जोड़ा जाता है। पर जहाँ अनोखापन दृष्टिगोचर होने लगे, तो यही कहना पड़ता है कि पूर्वसंचित पुण्य या सुसंस्कार अनायास ही फलित होने लगे।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नरक के संबंध में भी इस क्षेत्र का प्रतिपादन यही है। कुछ बालक जन्म से अपंग, असमर्थ, मूढ़मति एवं कुसंस्कारी होते हैं। यह उन्हें वहाँ से नहीं मिली होतीं, जहाँ कि वे जन्मे। वैसी विपन्नता का कोई प्रत्यक्ष कारण दृष्टिगोचर न होने पर यही मानकर संतोष करना पड़ता है कि यह पूर्वजन्मों के शुभ-अशुभ संस्कारों की जन्मजात प्रतिक्रिया है।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मनोविकारों के शरीर व मन पर प्रभाव के रूप में परिणति ही कर्मफल मिलना है। यही हाथोंहाथ उपलब्ध होने वाला स्वर्ग-नरक है। क्या सही है, क्या गलत किंतु कर्मफल की सुनिश्चितता का तथ्य ऐसा है, जिसे अकाट्य ही समझना चाहिए। किए हुए भले-बुरे कर्म अपने परिणाम सुख-दुःख के रूप में प्रस्तुत करते रहते हैं। दुःखों से बचना हो तो दुष्कर्मों से पिंड छुड़ाना चाहिए, सुख पाने की अभिलाषा हो तो सत्कर्म बढ़ाने चाहिए। ईश्वर को प्रसन्न और रुष्ट करना सत्कर्मों एवं दुष्कर्मों के आधार पर ही बन पड़ता है, यह एक ध्रुव सत्य है।

□

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्वजन्म के संचित संस्कार, विलक्षण प्रतिभा के उपहार

जीवन की अविच्छिन्नता एक सचाई है। नवीनतम वैज्ञानिक अन्वेषणों का भी निष्कर्ष यही है कि जीवन में निरंतरता तो है ही, किंतु वे यह मानते हैं कि जीवन-ऊर्जा का रूपांतरण होता रहता है उनकी मान्यता है कि जीवन कोशिकाएँ और मस्तिष्क के विभिन्न चेतन-प्रकोष्ठ प्राणी की मृत्यु के उपरांत इधर-उधर बिखर जाते हैं, वे भूमि, जल, वनस्पतियों आदि में समाहित हो जाते हैं और बाद में आहार रूप में प्राणियों के भीतर रक्त-रस मज्जा में घुल-मिलकर उनकी संतति में 'सेल्स' 'जीन्स' 'प्रोटोप्लाज्म' आदि के रूप में सक्रिय रहते हैं।

अनेक व्यक्तियों द्वारा पूर्वजन्म की स्मृतियों के प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किए जाने का विश्लेषण वैज्ञानिक इसी रूप में करते हैं कि इन व्यक्तियों में पूर्ववर्ती उस व्यक्ति के, चेतन-प्रकोष्ठ अथवा प्रोटोप्लाज्म का कोई अंश गर्भस्थिति में, इनके निर्माणकाल में घुल-मिल जाता है, जिस व्यक्ति से संबद्ध प्रामाणिक विवरण बाद में बताते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पिछले जन्म की कुछ ख़ास घटनाओं का विवरण जो मस्तिष्क के किसी चेतन-प्रकोष्ठ में अंकित-सुरक्षित था, वही चेतना-प्रकोष्ठ भर नए प्राणी के भीतर आ गया है। पूर्ववर्ती व्यक्ति का संपूर्ण मनोजगत या आत्मा से जुड़े समूचे संस्कार समूह नए शरीर में उसी पुरानी आत्मा के साथ स्वाभाविक रूप में आ गए हैं, ऐसा वैज्ञानिक अभी नहीं मानते। पूर्वजन्म की किन्हीं स्मृतियों के प्रामाणिक पुनर्प्रस्तुति मात्र उनकी दृष्टि में उसी आत्मा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वारा नया शरीर धारण करने का यथेष्ट प्रमाण नहीं है। वे यह मानते हैं कि घास-पात, पेड़-पौधे में मृत प्राणी के प्रोटोप्लाज्म के अंश घुल-मिल गए, वही अंश आहार द्वारा मनुष्य शरीर में पहुँचे और संतान में अभिव्यक्त हुए।

इन वैज्ञानिकों की इस परिकल्पना को यदि सही माना जाए, तब यह प्रकट होता है कि किसी भी नई संतान के व्यक्तित्व के निर्माण में आनुवंशिक विशेषताएँ ही सर्वप्रधान कारण होती हैं, हाँ छिटपुट नई विशेषताएँ अवश्य प्रोटोप्लाज्म आदि के रूप में संतान में प्रविष्ट हो सकती हैं। किंतु उसका संपूर्ण व्यक्तित्व आनुवांशिक विशेषताओं के वाहक 'जीन्स' से ही गठित होता है। गुण-धर्म-स्वभाव आदि का निर्माण ये वंशानुगत 'जीन्स' ही करते हैं।

आनुवंशिकी की ये स्थापनाएँ शारीरिक संरचना के क्षेत्र में तो अब तक पूरी तरह खरी उतरती रही हैं। संतान की नाक, कान, आँख, दाँत, मुँह, यष्टि, अंग-उपांग एवं विभिन्न अवयवों की बनावट तो वंशानुगत विशिष्टताओं के ही किसी-न-किसी अनुपात में सम्मिश्रण का परिणाम होती हैं। किंतु बुद्धि और भावना के क्षेत्र में ऐसी विलक्षणताएँ संततियों में उभरती देखी-पाई गई हैं कि उनका आनुवंशिकी से दूर का भी संबंध नहीं सिद्ध हो पाता और बड़ी दिमागी जोड़-तोड़ के बाद भी यह नहीं स्पष्ट हो पाता कि आखिर अमुक व्यक्तियों की अमुक संतान में ये बौद्धिक भावनात्मक विशेषताएँ आईं कहाँ से, जो न तो उसके माता-पिता के वंश में थीं और न ही वातावरण में। उन विशेषताओं को प्रोटोप्लाज्म आदि के अंश की अभिव्यक्ति भी नहीं मान सकते, क्योंकि ऐसे लोगों में ये विलक्षणताएँ आंशिक रूप में नहीं होती, अपितु उनके संपूर्ण व्यक्तित्व का ही वैसा गठन होता है। ऐसी स्थिति में यही मानने को बाध्य होना पड़ता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

है कि व्यक्तित्व की ये विशेषताएँ आनुवंशिकी, पर्यावरण अथवा परिव्राजक प्रोटोप्लाज्म की कृपा नहीं, बल्कि उसी व्यक्ति द्वारा पिछले जन्म में अर्जित-वर्धित, संचित-सुरक्षित विशेषताएँ हैं जो जन्मना ही उसमें उभर आई हैं।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अशिक्षा, अज्ञान और अभाव के वातावरण में अप्रतिम मेधावी विद्वान संगीतज्ञ, गणितज्ञ आदि का पैदा होना, श्रेष्ठ परंपराओं और उत्कृष्ट वातावरण वाले परिवारों में दुर्गुणी-दुराचारी संतति का जन्म जैसी घटनाएँ आएदिन देखने को मिलती हैं। जिस देश, समाज और परिवार में चारों ओर मांसाहार एक सामान्य आहार अभ्यास के रूप से स्वीकृत हो, वहाँ किसी अबोध बालक द्वारा मांस को छूने से भी अस्वीकार कर देना और पूर्ण सात्त्विक शाकाहारी भोजन पसंद करना, क्रूरता के वातावरण में जन्मतः अथाह करुणा की प्रवृत्ति का पाया जाना आदि अनेक विचित्रताएँ देखने में आती रहती हैं, जो आनुवंशिकी संबंधी अथवा जीवात्मा के मरणोपरांत बिखर जाने संबंधी स्थापनाओं को खंडित करती हैं तथा उसी आत्मा द्वारा नया शरीर धारण करने की पुष्टि करती प्रतीत होती हैं।

महान वैज्ञानिक आइंस्टाइन ने ऐसी ही एक विलक्षण प्रतिभा के किशोर की सामर्थ्य को देखकर उसे भावावेश में अपनी बाँहों में उठा लिया था और आनंदातिरेक से बोल उठे थे—"किशोर! तुमने आज फिर एक बार इस विश्व में ईश्वर के संचालक होने का विश्वास दिलाया है।"

उस प्रतिभाशाली किशोर का नाम था मेनुहिन। तब वह मात्र आठ वर्ष का था। कुछ वर्षों पूर्व उन्हें भारत में भी नेहरू पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आज वह दुनिया का सर्वोत्कृष्ट वायलिनं वादक है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

यहूदी मेनुहिन के माता-पिता में से कोई भी संगीतकार नहीं थे।
CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
वे स्कूल में साधारण शिक्षक थे। किंतु मेनुहिन में बचपन से ही संगीत की विलक्षण सामर्थ्य थी। आठ वर्ष की आयु में उसने बीथोवियन, ब्राह्मस, बारव जैसे महानतम संगीतकारों की कठिन संगीत रचनाओं को कुशलता से प्रस्तुत कर लोगों को चकित कर दिया था। सामान्य श्रोताओं की तो बात ही क्या, श्रेष्ठ संगीतज्ञों और संगीत समीक्षकों तक ने उसका वायलिन-वादन सुना तो विस्मय-विमुग्ध हो गए।

तीन वर्ष के नन्हें मेनुहिन की वायलिन-वादन की सामर्थ्य विलक्षण ढंग से प्रकट हुई। उसके माता-पिता उसके लिए नकली वायलिन खेलने के लिए लाए। मेनुहिन ने उसे बजाया, तो उसका संगीत उसे रुचिकर नहीं लगा। उसने वह खिलौना फेंक दिया और मचल गया। माना तब, जब माता-पिता ने असली वायलिन लाकर दिया। उसे पाते ही वह बालक उसी में लीन रहने लगा। उसकी दक्षता उभर आई। तब जाकर चार वर्ष की आयु में माता-पिता ने उसे संगीत शिक्षा दिलानी शुरू की। उसकी विलक्षण गति एवं लगन से संगीत शिक्षक भी विस्मित हो उठता। छह वर्ष के मेनुहिन ने सेनफ्रांसिस्को में हजारों श्रोताओं के सामने एक श्रेष्ठ संगीत-रचना प्रस्तुत की। अगले दिन अमेरिकी अखबार उसकी प्रशंसा से भरे थे।

यद्यपि बाद में मेनुहिन ने श्रेष्ठ संगीत शिक्षकों से संगीत की शिक्षा ग्रहण की, तथापि उसके प्रत्येक शिक्षक ने यह कहा कि हमने इसे सिर्फ सिखाया ही नहीं, इससे बहुत कुछ सीखा भी है।

टोस्कानिनी जैसे विश्वविख्यात संगीत-संचालकों ने उसे अलौकिक वायलिनवादक कहा। विश्व के अनेक शीर्षस्थ कलाकारों, वैज्ञानिकों, राजनेताओं, लेखकों, संगीतज्ञों ने उसकी एक स्वर से

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रशंसा की है और उसकी जन्मजात विलक्षण सामर्थ्य को ईश्वरीय वरदान कहा है। स्पष्ट है कि मेनुहिन की यह क्षमता आनुवंशिक विशेषता नहीं है। यह उसके पूर्वसंचित संस्कारों का पिछले जन्म की प्रगति का प्रतिफल हो सकता है।

महान गणितज्ञ जानकार्ल फ्रेडरिक गॉस भी ऐसा ही अनुपम प्रतिभाशाली था। ३० अप्रैल, १८७७ को जर्मनी के ब्रन्सविक शहर में उत्पन्न गॉस के पिता किसान थे और गरीब थे। छोटी-मोटी ठेकेदारी भी करते थे। तीन साल की ही आयु में उसने एक दिन मजदूरों का हिसाब कर रहे पिता की गलती पकड़ ली थी और उसे सुधार दिया था। नौ वर्ष की आयु में उसने कक्षा में अध्यापक को उस समय चमत्कृत कर दिया, जब गणित का लंबा प्रश्न बोर्ड पर लिखकर जैसे ही अध्यापक रुके, गॉस ने उस कठिन प्रश्न का सही उत्तर प्रस्तुत कर दिया।

१४ वर्ष की आयु में उसकी चारों ओर प्रसिद्धि फैली। ब्रन्सविक के राजा ने उसे अपने दरबार में बुलाया, जहाँ उसने अपनी गणित विद्या की धाक जमाई। १९ वर्ष की आयु में उसने यूक्लीडियन सूत्रों में एक मूलभूत संशोधन प्रस्तुत किया कि सत्रह समान भुजाओं की आकृति को परकार तथा सीधी रेखाओं द्वारा भी बनाया जा सकता है। २२ वर्ष की आयु में उसने अपनी 'थीसिस' में 'फंडामेंटल थ्योरम ऑफ अलजेब्रा' नामक सिद्धांत प्रस्तुत किया। २५ वर्ष की उम्र में उसने 'आंकिक सिद्धांत' ग्रंथ रचा, ज़िसने गणितीय विश्व में तहलका मचा दिया।

चलते-फिरते ज्ञानकोश, अद्‌भुत स्मरण शक्ति के धनी अनेक विलक्षण व्यक्ति आएदिन देखने को मिलते हैं। इनके माता-पिता के वंश में अथवा वातावरण में इनमें से कोई भी विशेषताएँ विद्यमान नहीं

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri
पाई जातीं। ऐसी स्थिति में यही मानना पड़ता है कि उनकी यह विभूति स्वयं उनके द्वारा पूर्वजन्म में अर्जित क्षमताओं का ही सत्परिणाम है।

इन विशेषताओं एवं भिन्नताओं का प्रत्यक्ष कारण ढूँढ़ने पर कोई ऐसा आधार नहीं मिलता जो मानवी मस्तिष्क को संतुष्ट कर सके। वातावरण एवं आनुवंशिकी जैसे वैज्ञानिक आधारों पर भी उक्त विषमताओं का कारण स्पष्ट नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में कर्मफल एवं पुनर्जन्म के सिद्धांत ही समाधानकारक सिद्ध होते हैं। वैचारिक दृष्टि से उनकी प्रामाणिकता असंदिग्ध है। स्पष्ट है कि आनुवंशिकी गुणों के अतिरिक्त भी बच्चे के साथ कुछ ऐसी विशेषताएँ जुड़ी होती हैं जो अधिक सूक्ष्म तथा सशक्त हैं। भारतीय संस्कृति में उन्हें ही सूक्ष्म संस्कार कहते हैं, जो मरणोपरांत भी जीवात्मा के साथ संलग्न रहते हैं तथा जन्म के साथ बच्चों में प्रकट होते हैं। जो उपयुक्त वातावरण में पोषण पाकर दृष्टिगोचर होते हैं। पातंजलि योग सूत्र के साधनपाद में इस तथ्य का इस प्रकार रहस्योद्‌घाटन हुआ है—

"क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्ट जन्मवेदनीयः ॥ १२ ॥
सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ॥ १३ ॥"

"यदि पूर्व जन्म के कर्म अच्छे हैं, तो उत्तम जाति, आयु और भोग प्राप्त होते हैं। जब मनुष्य शरीर त्याग करता है, तब इस जन्म की विधा, कर्म और पूर्व प्रज्ञा आत्मा के साथ जाती है और उसी ज्ञान और कर्म के अनुसार जन्म होता है, यानी वैसे ही संस्कार जन्म के साथ प्रकट होते हैं।"

पुनर्जन्म की पुष्टि वैज्ञानिक आधारों पर भी होती है। भौतिकी के पदार्थ के अविनाशिता के सिद्धांतानुसार न तो पदार्थ की उत्पत्ति होती है और न ही विनाश ही। मात्र उसका रूपांतरण होता है। इस रूपांतरण की प्रक्रिया में ही नित्य नए दृश्य दिखाई पड़ते हैं। पदार्थों

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

का रूपांतरण ही उनका पुनर्जन्म है। प्रसिद्ध परामनोवैज्ञानिक
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
डॉ० रेना रूथ ने अपनी पुस्तक 'री-इनकारनेशन एंड साइंस' में भौतिकीविद क्लीफार्ड स्वाडस के सिद्धांत का उल्लेख किया है कि पदार्थ एवं ऊर्जा दोनों ही परस्पर परिवर्तनशील हैं। ऊर्जा परिवर्तित हो सकती है, अदृश्य हो सकती है पर नष्ट नहीं होती। उन्होंने डी० एन० ए० (डिऑक्सीरीबो न्यूक्लिक एसिड) को संस्कार वाहक माना है। उनकी मान्यता है कि 'डी० एन० ए०' संस्कारों के साथ ही अदृश्य जगत में मृत्यूपरांत अदृश्य रूप में विद्यमान रहता है तथा जन्म के समय पुनः प्रकट होता है। अब तो पुनर्जन्म के सिद्धांतों को वैज्ञानिक कसौटी पर कसने के लिए हमें सब एटामिक, एंटीयूनीवर्स जगत में प्रवेश करना होगा।

जन्म-जन्मांतर के संस्कार

जन्मजात प्राप्त क्षमताएँ एवं प्रतिभाएँ इस तथ्य की पुष्टि करती हैं कि मनुष्य की अर्जित बौद्धिक विशेषताएँ इस जीवन तक ही नहीं रहतीं, वरन अगले जन्मों में भी बनी रहती हैं। विश्व भर में कितने ही बालक ऐसे हुए हैं, जो अल्पायु में ही असामान्य प्रतिभासंपन्न देखे गए। आधुनिक ग्रामोफोन के आविष्कार एवं विद्युत लैंप के जन्मदाता अमेरिका निवासी टामस एल्वा एडिसन ने मात्र दस वर्ष की आयु में सियर बर्टन एवं गिलन के महान ग्रंथों एवं डिक्शनरी ऑफ साइंस का अध्ययन पूरा कर लिया। पंद्रह वर्ष की आयु में वे एक स्थानीय पत्र के संपादक बने। सापेक्षवाद को जन्म देने वाले अल्बर्ट आइन्स्टीन के गणित के प्रश्नों की बौछार से सैकेंडरी स्कूल के अध्यापक परेशान हो जाते थे तथा उत्तर देने में अपने को अक्षम पाते थे। १४ वर्ष की अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते उन्होंने भौतिक विज्ञान, बीजगणित, उच्च ज्यामिती जैसे विषयों में विशेषता प्राप्त कर ली।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

माइकेलग्रास्ट मिशिगन स्टेट यूनीवर्सिटी का प्रथम विद्यार्थी था, जिसने मात्र १५ वर्ष की आयु में गणित जैसे क्लिष्ट विषय में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। एल्मर स्पेरी ने दस वर्ष की आयु में मसाला पीसने की मशीन बनाई, पानी के चक्र का आविष्कार किया। रेलमार्ग पर चलने वाली तीन पहियों वाली पैडल की गाड़ी बनाई। बोनेटेरेकी को दो वर्ष चार माह की आयु में ३५०० शब्द याद थे एवं प्रसिद्ध कवियों की १०० कविताएँ कंठस्थ थीं। उसका बौद्धिक स्तर (आई० क्यू०) १८५ आंका गया। जो असाधारण प्रतिभा से भी ४५ अधिक होता है। मास्को की इर्मासोखादभे नामक नौ वर्षीय बालिका अठारह भाषाओं के दो सौ गाने गाया करती थी। तीन वर्ष की आयु में ही उसने सभी प्रकार के संगीत में विशेषता अर्जित कर ली।

जर्मनी का जॉन फिलिप नामक दो वर्षीय बालक फ्रेंच, जर्मन और लैटिन भाषा धारा-प्रवाह बोलता था। पाँचवे वर्ष में उसने बाइबिल का ग्रीक भाषा में अनुवाद करना आरंभ कर दिया। छह वर्ष की आयु में वह बर्लिन की रायल एकेडेमी का सदस्य बना और पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। यह विश्व का पहला मेधावी बालक था जिसने इतनी कम आयु में पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की हो। १९ वर्ष की अल्पायु में वह मर गया। जर्मनी का विलक्षण बालक 'क्रिश्चियन फ्रेडरिक हीन केन' जन्म के कुछ घंटों बाद ही बोलने लगा था। दो वर्ष की आयु में ही उसे बाइबिल के सभी प्रसंग याद हो गए। अमेरिकी बालक 'विलियम जेम्स सिदिस' दो वर्ष का था, तभी से पढ़-लिख सकता था। आठ वर्ष की उम्र में वह छह विदेशी भाषाओं का जानकार था।

फ्रांस का लुई कार्दियेक नामक बालक जन्म के तीसरे माह से ही वर्णमाला पढ़ने लगा था। तीन वर्ष की आयु में वह लैटिन भाषा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

पढ़ लेता था। फ्रेंच और अँगरेजी भाषा का वह लैटिन अनुवाद भली
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
भाँति कर लेता था। हीब्रू और ग्रीक भाषाओं पर भी उसका पूर्ण अधिकार था। सातवें वर्ष में उसकी मृत्यु हो गई। इंग्लैंड का विलियम हेनरी वेट्टी ग्यारह वर्ष की आयु में अभिनय के क्षेत्र में विश्व-विख्यात हुआ। बचपन से ही वह शेक्सपीयर के नाटक में हैमलेट की भूमिका बड़ी कुशलता से निभाता था। इस अल्पायु में एक बार वह लंदन के क्वेंट गार्डन के रंगमंच पर पहली बार अभिनय के लिए उतरा, तो इतनी अधिक भीड़ हुई कि उसे हटाने के लिए पुलिस बुलानी पड़ी। उसे प्रत्येक अभिनय के लिए ग्यारह सौ रुपये प्राप्त होने लगे थे। मैकाले दो वर्ष की आयु में ही पढ़-लिख सकता तथा बुजुर्गों जैसी बात करता था। आठवें वर्ष में उसने विश्व का इतिहास नामक पुस्तक लिखी।

प्रो० हार्वी फ्रिडमैन ने १०वें वर्ष में इंजीनियरिंग में पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। बिना मैट्रिक परीक्षा दिए ही उसने छह वर्ष की आयु में मैसाचुसेट्स इंजीनियरिंग कॉलेज के छहवर्षीय अभ्यासक्रम को पूरा कर लिया। जर्मनी का नौ वर्षीय बालक कार्लविट अपनी असाधारण प्रतिभा के कारण ही लिपजिंग विश्व विद्यालय में प्रवेश पाने में सफल हो गया। चौदह वर्ष की आयु में उसे पी-एच० डी० तथा सोलहवें वर्ष में डॉक्टर ऑफ लॉ की उपाधि प्रदान की गई।

विदेशों में ही नहीं, भारत में भी अनेकों व्यक्ति पैदा हो चुके हैं, जो बाल्यावस्था में ही विलक्षण प्रतिभासंपन्न थे। शंकराचार्य ने सोलह वर्ष की आयु में भारत के सभी मूर्द्धन्य विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित कर दिया। मुगल सम्राट अकबर ने तेरहवें वर्ष में ही राजगद्दी सँभाली थी। वह एक कुशल प्रशासक सिद्ध हुआ। छत्रपति शिवाजी ने तेरह वर्ष की आयु में ही तोरण का किला जीत लिया।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

रवींद्रनाथ टैगोर ने अपनी पहली प्रसिद्ध पुस्तक १८वें वर्ष में पूरी की थी। भारत की प्रथम महिला गर्वनर श्रीमती सरोजनी नायडू ने चौदह वर्ष की अल्पायु में चौदह सौ पंक्तियों की एक गंभीर कविता की रचना की थी। श्रीनिवास रामानुजम केवल ३२ वर्ष जिए, पर इस संक्षिप्त अवधि में गणितज्ञ के रूप में उन्होंने विज्ञान जगत को जो उपलब्धियाँ दीं, वे आज गणितशास्त्र का मूल आधार बनी हुई हैं।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पश्चिम जर्मनी के ऑसवर्ग नामक स्थान पर जन्मी फ्रैड्रिका का केस इस तरह की घटनाओं में बहुत दिलचस्प है। उसका रंग, रूप, कद-काठी तो जर्मनों की तरह ही था, परंतु उसकी आँखें भारतीय महिलाओं की तरह काली और केश भी भारतीय स्त्रियों जैसे ही थे। कम उम्र में ही उसने विलक्षण बुद्धि का परिचय दिया और पढ़ना-लिखना सीख लिया। वह अपना प्रत्येक काम अपनी उम्र के बच्चों की अपेक्षा अधिक कुशलता और स्फूर्ति के साथ निबटा लेती थी। जब वह तेरह-चौदह वर्ष की थी, तभी उसने जर्मन, डच और अँगरेजी भाषा का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। भारतीय भाषाओं में उसने संस्कृत को सीखने में बड़ी कुशाग्रता का परिचय दिया। उल्लेखनीय है कि जर्मनी की लगभग सभी शिक्षण संस्थाओं में संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन की सुविधा उपलब्ध है। फ्रैड्रिका ने इस व्यवस्था का लाभ तो उठाया ही, भारतीय धर्म दर्शन के अध्ययन-मनन में भी उसने पर्याप्त रुचि ली और कुछ ही समय बीतते वह पूजा-पाठ करने लगी। उसने वेद-पुराणों और आर्षग्रंथों के कई अंश कंठस्थ कर लिए। किशोरावस्था में प्रवेश करने तक तो वह ज्योतिष, अंकशास्त्र; पराविद्या, ब्रह्मविद्या, योगचक्र, कुंडलिनी आदि के विषय में भी इस प्रकार बातें करने लगी, जैसे वह इन विषयों की अधिकारी विद्वान हो।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

फ्रेडरिका के पिता बैंक में नौकरी करते थे। परिवार की स्थिति सामान्य थी। माँ अपनी बेटी के इस स्वभाव और रुझान को देखकर चिंतित रहने लगी थी। बचपन में ही उसने अपनी माँ की चिंताओं का समाधान करते हुए बताया कि वह पिछले जन्म में एक धर्मपरायण भारतीय महिला थी और उसका सारा जीवन ही धार्मिक कर्मकांडों तथा पूजा-पाठों को करते हुए व्यतीत हुआ था। उसने वेद-पुराणों और अन्य भारतीय धर्मग्रंथों का गहन अध्ययन किया था। एक दुर्घटना में जब उसकी मृत्यु हुई, तो मरने के पूर्व उसे अच्छी तरह होश था तथा वह मरते समय यही सोचती रही थी कि उसे अगला जन्म जहाँ कहीं भी मिले, वेद-पुराणों तथा धर्मशास्त्रों के अध्ययन में उसकी रुचि इसी प्रकार बनी रहे।

फरवरी १९७९ में फ्रैडरिका भारत भी आई। यहाँ उससे बरेली की पराविद्या शोध संस्थान की उस यूनिट ने संपर्क किया जो पुनर्जन्म पर शोध कर रही थी। फ्रैडरिका ने अपने पिछले जन्म का जो भी विवरण बताया, यथा जन्मस्थार्न, माता-पिता का नाम, परिवार के संबंध में परिचय, पति और पति के परिवार की जानकारी, बच्चों के नाम आदि के संबंध में उसने जो भी वक्तव्य दिए, वे सब टेप किए गए और उस आधार पर जाँच की गई, तो बताए गए सभी विवरण सही पाए गए।

गणितशास्त्र के मूर्द्धन्य विद्वान पास्कल को रेखागणित के प्रति बचपन से ही विशेष रुचि थी। वह बचपन से ही भूमि पर रेखांकन द्वारा विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ बनाया करता। माता-पिता ने उसकी इस प्रवृत्ति को रोकने की भी कोशिश की। किंतु लुक-छिपकर वह आकृतियाँ बनाकर उन्हें ध्यान से देखता तथा सोचता रहता था। बिना किसी पुस्तक एवं अध्यापक के उसने बारह वर्ष

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

की आयु में ही तीस 'साध्य' बनाए। उसकी असामान्य प्रतिभा ने
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
गणितशास्त्र के विद्वानों को भी अचंभित कर दिया तथा यह सोचने को बाध्य किया कि इतनी कम आयु में बिना किसी पुस्तक एवं अध्ययन, शिक्षण के यह कैसे संभव हो सका?

प्रसिद्ध विद्वान 'मायर्स' ने अपनी पुस्तक 'ह्यूमन परसनाल्टी' में सिसली में जन्मे एक गड़रिये के लड़के का उल्लेख किया है, जिसकी बौद्धिक क्षमता असामान्य थी। दस वर्ष की अल्प आयु में ही उसने पेरिस के विद्वानों की ऐकेडमी में अपने हिसाब की शक्ति से सबको आश्चर्यचकित कर दिया। ऐकेडमी में उपस्थित गणितशास्त्र के विद्वानों में से एक ने उससे पूछा ३७९६४१६ का घनमूल क्या है? आधे मिनट में ही उसने उत्तर दिया, १५६ जो बिलकुल ठीक था। पुनः २८२४७५२४९ का 'दसवाँ मूल पूछने पर उसने सात' बताया? अन्यान्य पूछे गए गणित के प्रश्नों का उत्तर भी उसने सही देकर उपस्थित सभी विद्वानों को अचंभित किया। उक्त बालक का नाम बाइटो मैंजियामील था।

सुमेश चंद्र दत्त नामक एक बालक भी बीसवीं सदी के तीसवें दशक में बड़ा लोकप्रिय हुआ। उसकी प्रतिभा असामान्य थी। ढाका का उक्त बालक १५ अंकों की राशि को १५ अंकों की राशियों से मौखिक गुणा कर सकता था। विकसित होकर यह क्षमता यहाँ तक जा पहुँची कि वह १०० अंकों की राशि का १०० अंकों की राशि से मौखिक गुणा कर सकता था। इस बच्चे की अद्‌भुत क्षमता का प्रदर्शन पूरे विश्व में हुआ। अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में उसने ६० अंकों का ६० अंकों के साथ गुणा मात्र ४५ मिनट में करके दिया। गुणा करने में किसी भी प्रकार के कागज, पेंसिल अथवा अन्य साधनों का प्रयोग नहीं किया गया। इन अंकों का गुणा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कोलंबिया विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर ने दो घंटे प्रतिदिन के हिसाब से खरच करके दो सप्ताह में किया था। किंतु उनका उत्तर सही न था। जबकि सुमेश चंद्र का मौखिक हल किया गया उत्तर सही था। गणित के अन्य प्रश्नों के हल में भी असामान्य बौद्धिक क्षमता का परिचय अमेरिका के विद्वानों को मिला। अमेरिका के अखबारों ने उसे 'दिमागी जादूगर' 'विद्युत की तरह काम करने वाला' (लाइटनिंग केलकुलेटर) जैसी उपाधि दी।

बौद्धिक सामर्थ्यों की विलक्षणता की ही तरह स्वभाव एवं संस्कारों की, भावनात्मक विलक्षणताएँ भी देखी जाती हैं। जॉर्ज बर्नार्ड शॉ के कुल में सभी मांसाहारी थे। समाज में भी मांसाहार का ही प्रचलन था। किंतु वे बचपन से ही शाकाहारी थे। देशभक्त परिवारों का देशद्रोही तथा दुराचाररत परिवारों में सज्जन-साधु व्यक्तियों का जन्म लेना भी संस्कारों की दृष्टि से वंशानुक्रम एवं वातावरण से विलक्षण ही है।

बुद्धि, भावना और गुण-स्वभाव की ये विलक्षणताएँ जो आनुवंशिकता तथा पर्यावरण के प्रभावों से सर्वथा भिन्न होती हैं, संबद्ध व्यक्तियों के स्वतः अर्जित संस्कार एवं सामर्थ्य का ही परिणाम मानी जा सकती हैं। इन प्रत्यक्ष उदाहरणों से यही तथ्य उभरता है कि शरीर नाश के साथ ही मानव जीवन का अंत नहीं हो जाता, न ही यह बिखरकर टुकड़े-टुकड़े होकर नदी, पर्वत, मैदान, वृक्ष, वनस्पति आदि में समाहित हो जाता, अपितु आत्मा का अस्तित्व शरीर त्याग के बाद भी बना रहता है और उससे जुड़े संस्कार समूह जन्म-जन्मांतर तक धारावाहिकता के साथ गतिशील रहते हैं। प्रगति-पथ पर बढ़ते रहा जाए, तो उसके सत्परिणाम इस जीवन में ही नहीं, अगले जीवन में भी मिलते हैं। इस तथ्य को समझ लिया जाए,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

तो आत्मिक विकास में कभी भी आलस्य-प्रमाद की मनोवृत्ति नहीं,
CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
उभर-पनप पाएगी। 'जब जागे तभी सवेरा' की तरह कितने ही विलंब से श्रेष्ठता की दिशा में कदम बढ़ाया जाए, तो भी उसमें निराशा की कोई बात नहीं। साथ ही, एक क्षण भी अनौचित्य-अनाचार में लगाया गया, तो उसका भी परिणाम अवश्य होगा। अतः उस दृष्टि से रत्ती भर भी लापरवाही हानिकर सिद्ध होगी और प्रत्येक गलती को सुधारने की आवश्यकता बनी रहेगी। इतना तो सत्कर्म कर लिया, अब जीवन का जो अंश बचा है, उसमें जरा मनमानी कर लें, मौज-मजे ले लें, यह भावना भी पूर्वजन्म को मानने वाले में कभी नहीं आ सकती। यौवन के उभार में आदर्शोन्मुखता और प्रौढ़ावस्था में भोग परायणता के जो दृश्य सामाजिक-राजनीतिक जीवन में देखे जाते हैं, वे जीवन की संकीर्ण धारणा का ही परिणाम हैं। पुनर्जन्म की वास्तविकता को समझने वाला तो अंतिम क्षण तक श्रेयस् पथ पर चलता रहेगा। बुढ़ापे में पढ़कर, साधना-स्वाध्याय कर या संयम-उपासना-सेवा का पथ अपनाकर भी क्या होगा, अब तो थोड़े दिनों का खेल है, चाहे जैसे दिन काटने हैं, यह भावना पुनर्जन्म पर सच्ची आस्था रखने वाले में नहीं आ सकती। उसके लिए तो जीवन का प्रत्येक क्षण और प्रत्येक कार्य महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उसका परिणाम अवश्यंभावी है।

कल का फल आज

इस संदर्भ में यह ध्यान रखना चाहिए कि ऐसी कोई बात नहीं है, जिससे यह समझा जाए कि जिन व्यक्तियों में जन्मजात रूप से कोई प्रतिभा मिली हुई दिखाई देती है, उन पर ईश्वर की कोई विशेष कृपा है और उसने पक्षपात करते हुए ये विशेषताएँ वरदान स्वरूप दे डाली हैं। वस्तुतः ऐसा कुछ नहीं है। जिन व्यक्तियों में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

जन्मजात एक-सी कोई प्रतिभा दिखाई देती है, वस्तुतः वह पिछले जन्म में किए गए प्रयासों, साधनाओं का ही परिपाक–परिणाम होती है। बहुधा ऐसे व्यक्ति पिछले जन्म में इस दिशा में अविराम श्रम करते हुए हार–थककर असफल हुए हैं और इस जन्म में उन्हें पिछले जन्मों की साधना का सत्परिणाम प्राप्त हुआ है। जिस प्रकार बुरे कर्मों का फल इस जन्म में नहीं तो अगले जन्म में मिलता है, उसी प्रकार अच्छे कार्यों का परिणाम भी निश्चित है। वह भी इस जन्म में नहीं तो अगले जन्म में निश्चित रूप से मिलता है।

कर्मफल की निश्चितता का विश्वास भले ही तत्काल कोई परिणाम न भी दिलाए, तो भी निरुत्साहित नहीं करता और पुनर्जन्म तो एक ऐसा ध्रुव सत्य है, जो अब केवल मानने या विश्वास करने का ही विषय नहीं रह गया है, वरन विज्ञान सिद्ध विषय बन चुका है। इस दृष्टि से असफलता के लिए भाग्य को दोष देकर हाथ पर–हाथ धरे बैठ जाने का कोई कारण नहीं है। प्रख्यात साहित्यकार और विचारक श्री इलाचंद्र जोशी ने जन्मजात प्रतिभासंपन्न दिखाई देने वाले व्यक्तियों के संबंध में लिखा है—"विराट जीवन के जो असंख्य पहलू और अनगिनत रूप हमारी कल्पना में उतरते रहते हैं, उनका विकास एक छोटे–से जीवन की सीमित परिधि में कदापि संभव नहीं है, उसके लिए कई जन्म चाहिए। प्रत्येक प्रतिभाशाली व्यक्ति अपने भीतर इस महासत्य को अनुभव करता है।"

भगवान बुद्ध के संबंध में तो प्रख्यात है कि उन्होंने पिछले सौ जन्मों की यात्रा पूरी करने के बाद बुद्धत्व को प्राप्त किया था। इन पिछले सौ जन्मों में वे गाय–बैल से लेकर कूकर–शूकर आदि कई मानवेतर योनियों में रहे और इतनी लंबी साधना के बाद जाकर कहीं बुद्ध बन सके। ऋषि–मुनियों के संबंध में तो पूर्वजन्मों

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

में अगणित बार असफल होने का विवरण मिलता है संत ज्ञानेश्वर, तुलसीदास, शंकराचार्य, कबीर, मीरा, सूरदास, चंद्रगुप्त, चाणक्य, पाणिनी आदि के बारे में भी ऐसी कई गाथाएँ प्रचलित हैं, जिनके अनुसार उन्हें पिछले जन्मों में विफलता का मुँह देखने को मिला था और उसके बाद जाकर कहीं सफलता मिली थी। आत्मिक उत्कर्ष के क्षेत्र में तो अनेक जन्मों में सिद्धि प्राप्त होने का उल्लेख शास्त्र ग्रंथों में कई स्थानों पर मिलता है। एक जन्म में असफल हो जाने के बाद साधक की क्या स्थिति होती है, यह दर्शाते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनंदन॥
पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते॥
प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्॥

—*गीता ६ / ४३, ४४, ४५*

"हे कुरुनंदन अर्जुन! वह योगियों के कुल में जन्म लेकर पूर्वजन्म के संस्कार को प्राप्त करता है और उसके प्रभाव से वह उस दिशा में और अधिक प्रयत्न करता है। उसी पूर्व अभ्यास से अवश्य ही खिंचा आता है, क्योंकि योग का जिज्ञासु भी सकाम कर्मों के फल का अतिक्रमण कर जाता है। प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करने वाला योगी तो पाप रहित और अनेक पूर्वजन्मों के संस्कारों की सहायता से सिद्ध होकर तत्काल परमगति को प्राप्त कर लेता है।"

यही तथ्य प्रगति और उन्नति के अन्यान्य क्षेत्रों में भी लागू होता है। पश्चिमी देशों में तो अब शेक्सपीयर, गेटे और बर्नार्ड शॉ प्रभृति

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
विद्वानों की प्रतिभा को एक जन्म की नहीं अनेक जन्मों की साधना और संस्कारों की पूँजी से उच्च स्थिति में पहुँचा माना जाता है। कुछ ऐसे उदाहरण सामने भी आए हैं, जिनमें ख्याति प्राप्त व्यक्तियों ने अपनी पूर्वजन्म की स्मृतियाँ बताईं और वे पूरी तरह सही निकलीं। इस आधार पर यह दावे के साथ कहा जाने लगा कि महान व्यक्तियों की महान उपलब्धियाँ अथवा जन्मजात प्रतिभाएँ एक ही जीवन की देन नहीं होतीं और न ही प्रकृति या परमात्मा का पक्षपातपूर्ण अनुदान।

संस्कार और अमुक्त वासना

पकाए मांस की पहली कटोरी जैसे ही बच्चे के सामने रखी गई, उसने भोजन करने का वह स्थान ही छोड़ दिया। फिर माँ के लाख प्रयत्न करने पर भी बच्चे ने उस दिन भोजन नहीं किया। उसने दृढ़तापूर्वक बताया—"मांस वैसे ही घृणित खाद्य है। पर वह जिस तरह जीवों का उत्पीड़न करके निकाला जाता है, उस कारण तो किसी भी दृष्टि से स्पृश्य नहीं रह जाता। उससे दुर्गुण बढ़ते हैं। मेरे लिए दूध और फल ही काफी हैं। फिर मेरे आगे मांस लाया गया, तो मैं तुम लोगों के साथ नहीं रहूँगा।"

अमेरिका में जहाँ छोटी आयु से ही बच्चे को मांस खाना होता है, वहाँ बिना किसी पूर्व शिक्षा और ज्ञान के बच्चे का मांस के दुर्गुण के प्रति यह व्याख्यान आश्चर्यजनक ही था। माँ ने यह बात लड़के के पिता से भी कही, पर पिता ठहरे वैज्ञानिक—सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक। उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। सोचा लड़के जिद्दी प्रकृति के होते हैं, कोई बात हो गई होगी। बच्चा अपने आप पारिवारिक साँचे में ढल जाएगा। इस आत्मआश्वासन के साथ ही वे अपने काम में जुट गए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
जिस घटनाक्रम का विकास इन पंक्तियों में हो रहा है, वह कोई कहानी नहीं, वरन एक ऐसी घटना है, जिसने अमेरिका के लब्ध प्रतिष्ठित जीवशास्त्री डॉ० ह्यूम वॉन एरिच जैसे वैज्ञानिक को भी चक्कर में डाल दिया। प्रथम अवसर था, जब उन्हें यह विश्वास करना पड़ा कि पुनर्जन्म सिद्धांत कोरी कल्पना नहीं। डॉ० ह्यूम वॉन एरिच की जीन्स के अध्ययन में और भी प्रगति हुई होती, पर एक अप्रत्याशित घटना ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। अब तक के शोध के आधार पर उनका विश्वास था कि शरीर–रचना की तरह गुण और संस्कार भी आनुवंशिकी होते हैं अर्थात उनमें कोई अतिवाहिकता नहीं होती, ये भी जीन्स के द्वारा माता–पिता अथवा ऊपर की ही किसी पीढ़ी से आए हुए होते हैं।

लेकिन यहाँ जो हुआ उसने तो इस सिद्धांत को ही काटकर रख दिया। यही लड़का जिसने एक दिन मांस को घृणित और पशु–प्रवृत्ति कहकर ठुकरा दिया था। आज पिता ह्यूम के सामने एक विचित्र भाषा में भाषण करने लगा। पहले तो पिता ने समझा कि लड़का अनर्गल प्रलाप कर रहा है। पर जब लड़का कई दिन तक उसी प्रकार की टेढ़ी भाषा में बोलता रहा, तो उन्होंने भाषाविदों की सहायता ली। एक भाषाविद ने बताया कि लड़का शुद्ध संस्कृत में बोलता है। लड़के द्वारा बोले गए वाक्यांशों का टेपरिकार्ड कराकर उनका भाषांतर कराया गया, तो पता चला कि लड़के ने जो कुछ कहा वह अनर्गल प्रलाप न होकर प्रवाहमान भावाभिव्यक्ति थी। ऐसी अभिव्यंजना जो किसी बहुत ही शिक्षित और समझदार द्वारा की गई हो। ह्यूम एक बार चक्कर खा गए, बच्चे में यह प्रतिभा कहाँ से आ गई? यह विचार–क्षमता कहाँ से उत्पन्न हो गई?

उन्होंने अपने व पत्नी के सब संबंधियों से पत्र डालकर पूछा, कोई भी ऐसा न निकला जो संस्कृत भाषा जानता रहा हो। जिन कई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
पीढ़ियों तक उन्होंने पता लगाया, संस्कृत तो क्या हिंदी जानने वाला भी कोई नहीं हुआ था। ह्यूम स्वयं इटैलियन थे। उनकी धर्मपत्नी भी इटैलियन थीं, आजीविका की दृष्टि से वे अमेरिका में आकर बस गए थे। संस्कृत तो उनके वंशजों में कोई जानता ही नहीं था, फिर इस बालक में यह संस्कार कहाँ से आ गए? क्या सचमुच पुनर्जन्म होता है? क्या सचमुच चेतना का कोई स्वतंत्र अस्तित्व भी है? जो मृत्यु के बाद भी अमर रहता हो, इस तरह के अनेक प्रश्नों ने उनके मस्तिष्क में एक तूफान खड़ा कर दिया।

समाधान उनके लड़के ने कर दिया। उसने बताया—"मैं पूर्व जन्म का एक भारतीय योगी हूँ। मेरा संबंध 'नाथ' नामक एक संप्रदाय से था, जो उत्तरीय पर्वतीय अंचल में पाया जाता है।" अपने निवास के बारे में बच्चे ने बताया—"मैं काँगड़ा के समीप कुटी बनाकर एकांत साधना किया करता था।"

"योग-साधना करते हुए मैं इच्छाओं के प्रवाह में बहता रहता। कभी भावनाएँ निष्काम हो जातीं तो भक्ति का आनंद मिलता, पर दूसरे ही क्षण धूप-छाँह की तरह परिस्थिति बदलती और कोई इच्छा आ खड़ी होती। एक दिन की बात है, दो अमेरिकन यात्री उस पहाड़ी पर चढ़ते हुए मेरी कुटी के पास तक आ गए थे। पूछने पर उन्होंने अमेरिका की रंगीनी के समाचार बताए। मैं बड़ा प्रभावित हुआ। मुझे लगा वहाँ जीवित स्वर्ग है। एकाएक इच्छा हुई कि अमेरिका जाऊँ और वहाँ का आनंद लूँ। मेरी यह इच्छा मुझे बलात अमेरिका के रंगीन जीवन की ओर खींचती रही। जब मेरी मृत्यु हुई, तब भी मन में वह इच्छा बनी रही।"

डॉ० ह्यूम अपने पुत्र की बातें सुनकर स्तब्ध अवाक् रह गए। पर वे इतनी शीघ्र इन बातों पर विश्वास करने वाले न थे। लड़के के बताए

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
काँगड़ा, नाथ संप्रदाय, पहाड़ियों के नाम, उस क्षेत्र के रीति-रिवाज आदि के संबंध में उन्होंने विस्तृत खोज की तो उन्हें अक्षरशः सही पाया। लड़का कभी भारत गया नहीं। पुस्तकों में उसने भारतवर्ष का नाम भी नहीं पढ़ा, रीति-रिवाजों का तो कहना ही क्या, फिर ये बातें, उसके मस्तिष्क में कहाँ से आईं; वे यह कुछ न समझ सके।

बड़े-बड़े मनोवैज्ञानिक, भाषाविद आए। सबने लड़के की बात-चीत टेप की, अलग-अलग अध्ययन किया, पर निष्कर्ष निकालते समय वे सब-के-सब माथे पर हाथ धरे सिर खुजलाते रह गए।

एक दिन लड़के ने कहा—"पिताजी! अमेरिका दर्शन की मेरी आकांक्षा पूर्ण हो गई है। अब मुझे मेरी मातृभूमि पहुँचा दीजिए। मैं अमेरिका में नहीं रह सकता।"

किसी तरह माँ उसे लेकर भारत जाने को तैयार हुई। विदेश यात्रा के लिए उन्होंने आवेदन-पत्र भी भर दिया। किंतु एक दिन प्रातःकाल उठकर जब वे अपने पुत्र के निजी कक्ष में गईं, तो देखा कि मौन-मुद्रा में उस लड़के का पार्थिव शरीर पद्मासन लगाए बैठा है। उसके प्राण तो कहीं और जा चुके हैं।

वस्तुतः मरणोत्तर जीवन की मान्यता और संस्कारों का दूरगामी प्रभाव-परिणाम अध्यात्म-दर्शन का एक बड़ा आधार है। चिंतन की शैली, आकांक्षा और दिशा का प्रभाव न केवल इस जीवन में विविध हलचलों की केंद्रीय प्रेरणा के रूप में क्रियाशील रहता है, अपितु अगले जीवन में भी यह प्रभाव बना रहता है। व्यक्तित्व को विकसित एवं परिवर्तित कर सकने की वास्तविक शक्ति इन्हीं संस्कारों की प्रखरता में सन्निहित है। संस्कार किसी ग्रह-नक्षत्र की कृपा से नहीं बनते-बिगड़ते। मनुष्य अपने मनोबल, विवेक और पुरुषार्थ से ही उन्हें निखारता है। अतः सत्संस्कारों को ही जन्म-जन्मांतर तक साथ

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

देने वाले अभिन्न मित्र समझकर उनकी संख्या और शक्ति बढ़ाने के लिए सदा सजग रहने में ही बुद्धिमानी है। यात्रा का पाथेय और प्रगति के सुनिश्चित आधार सत्कर्म तथा संस्कार ही हैं।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बिना किसी प्रशिक्षण, अध्ययन के बचपन से ही प्रतिभासंपन्न व्यक्ति यों के जीवनक्रम का अवलोकन करते हैं तो उनके असामान्य होने का प्रत्यक्ष कोई कारण हाथ नहीं लगता किंतु पुनर्जन्म के सिद्धांत को जोड़ देने भर से गुत्थी सुलझ जाती है। कर्मों का फल इसी जीवन में मिले, यह आवश्यक नहीं है। वह विशिष्ट प्रतिभा योग्यता अथवा अनुकूल–प्रतिकूल परिस्थितियाँ साथ लिए दूसरे जीवन में प्रकट होता है। प्रचलित भाषा में इसे ही 'भाग्य' के नाम से संबोधित किया जाता है। जन्म से ही प्राप्त अनुकूलताओं या प्रतिकूलताओं का भी कोई प्रत्यक्ष कारण ढूँढ़ने पर नहीं मिलता है। इनकी व्याख्या कर्मफल एवं पुनर्जन्म के सिद्धांतों के आधार पर ही की जा सकती है। पुरुषार्थ के बलबूते अनुकूल परिस्थितियाँ योग्यता–क्षमता अर्जित कर लेना संभव है। एक सीमा तक प्रारब्धों को भी बदला जा सकता है। वातावरण एवं आनुवंशिकी का भी एक सीमा तक प्रभाव पड़ता है। इतने पर भी उपर्युक्त प्रमाण पुनर्जन्म के सिद्धांतों का ही प्रतिपादन करते हैं।

भले–बुरे कर्मों का प्रभाव न केवल इस जीवन तक वरन अगले जीवन में भी संस्कारों के रूप में भी परिलक्षित होता है। अर्जित योग्यता एवं प्रतिभा भी सूक्ष्म संस्कारों के रूप में दूसरे जन्म में भी बनी रहती है। वह न केवल इस जीवन में वरन दूसरे ज़ीवन में भी विकास अथवा पतन का कारण बनती हैं। वैचारिक एवं वैज्ञानिक दृष्टियों से भी ज्ञान की महत्ता भली भाँति प्रमाणित है। इस तथ्य को समझने में पुनर्जन्म के सिद्धांत न केवल सहायक हैं, वरन सद्प्रेरणाएँ देने में भी पूर्णरूपेण सक्षम हैं। □

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मरण—सृजन का उल्लास भरा पर्व

कारखानेदार पुरानी मशीनें हटाते, पुरानी मोटरें बेचते रहते हैं और उनके स्थान पर नई मशीन, नई मोटर लगाते हैं। इससे कुछ असुविधा नहीं होती, सुविधा ही बढ़ती है। पुरानी मशीन आएदिन गड़बड़ी फैलाती थी, पुरानी मोटर धीमे-धीमे और रुक-रुककर चलती थी। नई लग जाने से वह पुरानी अड़चनें दूर हो गईं। नई के द्वारा बढ़िया काम होने लगा। जीर्णता के साथ कुरूपता बढ़ती है और नवीनता में सौंदर्य रहता है। पुराने पत्ते रूखे, शुष्क और कठोर हो जाते हैं, जबकि नई कोपलें कोमल और सुंदर लगती हैं। पुराने पत्ते झड़ने पर, पुरानी मशीन उखड़ने पर, पुरानी मोटर बिकने पर कोई इसलिए रंज नहीं मानता कि अगले ही दिन नवीन की स्थापना सुनिश्चित है।

आत्मा अनादि और अनंत है। वह ईश्वर जितनी ही पुरातन है और कभी नष्ट न होने वाली सनातन है। उसकी मृत्यु संभव नहीं। शरीर का परिवर्तन स्वाभाविक ही नहीं, आवश्यक भी है। हर पदार्थ का एक क्रम है—जन्मना, बढ़ना और नष्ट होना। नष्ट होना एक स्वरूप का दूसरे स्वरूप में बदलना भर है। यदि यह परिवर्तन रुक जाए तो मरण तो बंद हो सकता है, जन्म की भी कोई संभावना न रहेगी। यदि जन्म का उल्लास मनाने की उत्कंठा है, तो मरण का वियोग भी सहना ही होगा। वधू अपने माँ-बाप से बिछुड़कर सास-श्वसुर पाती है, सहेलियों को छोड़कर पति को सहचर बनाती है। यदि मायका छोड़ने की इच्छा ही न हो तो फिर ससुराल की नवीनता कैसे मिलेगी?

पीतल के पुराने बरतन टूट जाते हैं, तब उस धातु को भट्ठी में गलाकर नया बरतन ढाल देते हैं। वह सुंदर भी लगता है, सुदृढ़ भी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है। पुराने टूटे, चूते-रिसते, छेद, गड्ढे और दरारों वाले शरीर रूपी बरतन को चिता की भट्ठी में गलाया जाना तो हमें दीखता है, पर उसकी ढलाई की फैक्टरी कुछ दूर होने से दीख नहीं पड़ती है। सोचते हैं पुराना बरतन चला गया। खोज करने से विदित हो जाएगा कि वह गया कहीं भी नहीं जहाँ-का-तहाँ है, सिर्फ शक्ल बदली है।

पुराने मकान टूट-फूट जाते हैं। उन्हें गिराकर नया बनाना सुरक्षा और सुविधा की दृष्टि से आवश्यक है। नया बनाने के लिए जब पुराना गिराया जा रहा होता है तो कोई रोता-कलपता नहीं। शरीर के मरने पर फिर दुखी होने का क्या कारण है?

बहुत दिन साथ रहने पर बिछुड़ने का कष्ट उन्हें होता है, जिनकी ममता छोटी है। कुछ ही चीजें जिन्हें अपनी लगती हैं, कुछ ही व्यक्ति जिन्हें अपने लगते हैं, वे प्रियजनों के बिछोह की बात सोचकर अपनी संकीर्णता का ही रोना रोते हैं। वस्तुतः कोई किसी से कभी बिछुड़ने वाला नहीं है, समुद्र में उठने वाली लहरें जन्मती और मरती भर दीखती हैं, पर यथार्थ में समुद्र जहाँ-का-तहाँ है। कोई लहर कहीं जाती नहीं, सागर का अस्तित्व समग्र जहाँ-का-तहाँ परिपूर्ण रहता है। कुछ समय के लिए बादल बनकर उड़ भी जाए, तो नदियों के माध्यम से फिर अगले क्षण उसी महाजलाशय में आकर कल्लोल करता है। मरने के बाद भी कोई किसी से नहीं बिछुड़ता। सूर्य की किरणों की तरह हम सब एक ही केंद्र में बँधे हुए हैं। कुछेक प्राणी ही हमारे हैं, अन्य सब बिराने हैं, इस सीमाबद्धता से ही हमें शोक होता है।

मृत्यु का अर्थ है—कुरूपता का सौंदर्य में परिवर्तन। अनुपयोगिता के स्थान पर उपयोगिता का आरोपण। इससे डरने का न कोई कारण है और न रुदन करने का। वह तो उल्लासप्रद उत्सव है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस तथ्य से अपरिचित लोग मृत्यु का विचार आते ही अजीब तरह से हताश तथा उदास हो जाते हैं। मृत्यु का नाम हृदय पर एक ऐसा धक्का मारता है, जिससे जब तक उसका प्रभाव दूर नहीं हो जाता, हृदय एक भयपूर्ण विरक्ति से भरा रहता है। मृत्यु का भय उन्हें यहाँ तक कायर तथा मिथ्यापूर्ण बना देता है कि नित्यप्रति अनेक लोगों को मरते देखकर भी अपने मरने की कल्पना में संदिग्धता का समावेश कर लिया करते हैं। भय के कारण वे अपने हृदय में इस सत्य को पूरी तरह स्थान नहीं दे पाते कि एक दिन उन्हें इस संसार को छोड़ ही देना है।

इसमें संदेह नहीं कि जो मनीषी व्यक्ति मृत्यु के अनिवार्य सत्य को साहस के साथ हृदयंगम कर लेते हैं, वे न केवल उसके भय से ही मुक्त रहते हैं, प्रत्युत जीवन का पूरा-पूरा लाभ उठाते हैं। जिन्हें यह विश्वास रहता है कि न जाने मृत्यु किस समय अपनी गोद में उठा ले, वे जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग कर लेने में बड़ी तत्परता तथा सतर्कता से लगे रहते हैं। वे बहुत कुछ मृत्यु की वेला से पूर्व कुछ कर डालने के लिए प्रयत्नों में कमी नहीं रखते। मृत्यु का वास्तविक विश्वास उन्हें अधिकाधिक सक्रिय बना देता है।

इसके विपरीत जो मिथ्या विश्वासी मृत्यु से डर-डरकर जीवन में रेंगते हैं, वे बेचारे कुछ दूर भी ठीक से नहीं चल पाते। मृत्यु आकर उन्हें पकड़ ले जाती है। मृत्यु-जन्म अटल है, अनिवार्य है, तब उससे डरना क्या? मृत्यु से न डरने वाले ही उसे वरण करके चिरजीवी बनते हैं।

मृत्यु से अभय रहने वाला व्यक्ति उसे एक चुनौती मानकर साहस तथा उत्साहपूर्वक जीता हुआ यह कोशिश करता है कि वह जीवन के राजकुमार की तरह मृत्यु का मेहमान बने। जीवन की तरह मृत्यु भी उसे पाकर कृतार्थ हो जाए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
मनुष्य की स्वाभाविक वृत्तियों में भय की गणना भी की गई है। किंतु वह भय कायरता का नहीं, सतर्कता का लक्षण है। यों तो कोई भी मरना नहीं चाहता। मृत्यु से बचने का हर संभव उपाय किया करता है। सड़क पर चलते मोटर से बचना, नदी में नहाते समय डूबने से सावधान रहना, मृत्यु भय नहीं है। हिंस्र जंतुओं, रोगों तथा शत्रुओं से जीवन-रक्षा करने में यथासंभव उपायों का करना स्वाभाविक है। निरर्थक एवं निरुद्देश्य मर जाना कोई वीरता नहीं मूर्खता है। 'हाय मैं मर जाऊँगा' की ही भावना ही मृत्यु का वह भय है, जो कायरता की कोटि में आता है। मनुष्य को 'हाय मर जाऊँगा' की ही हीन भावना के वशीभूत होकर कायरता का परिचय नहीं देना चाहिए।

'हाय मर जाऊँगा' की भावना में रो-तड़पकर मृत्यु से बचा तो जा ही नहीं सकता। उलटे यह भावना जीवन को बोझिल एवं भयावह बना देती है। मृत्यु से निरपेक्ष रहकर जीवन-रक्षा का हर संभव उपाय करते हुए, आ जाने पर साहसपूर्वक उसका सहर्ष आलिंगन करने में ही पुरुषार्थ की शोभा है। महान मृत्यु के अवसर पर जीवन का मोह अश्रेयस्कर दुर्बलता है।

मृत्यु का भय उत्पन्न करने में परलोक की चिंता का बहुत बड़ा हाथ है। लोगों का यह सोचते रहना कि मर जाने के बाद न जाने हमारा क्या होगा? हम कहाँ, किस लोक अथवा योनि में भ्रमण करेंगे? न जाने हमारी सद्गति होगी अथवा अगति? मृत्युभय को एक बड़ी सीमा तक बढ़ा देता है? परलोक की चिंता ठीक है, वह करनी भी चाहिए। किंतु इस शुभ चिंता से मृत्यु के अशुभ भय का पैदा होना बड़ी ही असंगत तथा अस्वाभाविक बात है। फिर भी परलोक की चिंता से लोगों में मृत्यु का भय उत्पन्न होता है। इसका एकमात्र कारण लोक को बिगाड़कर चलना है। परलोक का कोई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। परलोक इस लोक की परिणति है। जिस प्रकार का हमारा लोक होगा, हमारे लिए उसी प्रकार के परलोक की रचना होगी। यदि हमने अपने आलस्य, अकर्म, अकर्त्तव्य अथवा अनीति, अत्याचार से अपने लोक को दग्ध कर लिया है और ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट, काम, क्रोध, मोह आदि विकारों तथा वासनाओं से विषैला बना लिया है, तो निश्चय ही उसी के अनुसार हमें चलते हुए लोकों को साकार करने पर विवश होना ही होगा। यदि हम जानते हुए भी अपने कर्मों से पतित परलोकों की रचना के लिए लोक में नींव रख रहे हैं, तो मृत्यु का भय हमें सताएगा ही। क्योंकि हम जानते हैं कि जो कुछ हम कर रहे हैं, मृत्यु के उपरांत उसका दंड भोगना ही है और इसीलिए मृत्यु की कल्पना आते ही भय से सिहर उठते हैं।

इसके विपरीत यदि हम लोक को परलोक का आधार मानकर उसे सजाने, सँवारने और सुंदर बनाने के शुभ प्रयत्नों को ईमानदारी से करते रहें, तो मृत्यु की कल्पना हमें विभोर करती रहे। क्योंकि हम जानते हैं, कि हम जो कुछ शिव तथा सुंदर कर रहे हैं, वह हमारे लिए मंगलमय परलोक की रचना कर रहा है, जिनको हम मृत्यु के उपरांत पुरस्कार के रूप में पाएँगे।

मनुष्य का विचार सान्निध्य भी मृत्यु के विषय में भय-अभय का कारण होता है। जिसकी चिंतनधारा जितनी अधिक जीवन के समीप रहेगी, वह उतना ही कम मृत्यु से डरेगा और जिनके विचार जितना अधिक मृत्यु का चिंतन करेंगे, वह उतना ही उससे भयभीत रहेगा। मृत्यु का चिंतन क्या करना? वह अपने समय पर आएगी, आती रहेगी, उसका विचार छोड़कर मनुष्य को जीवन की आराधना में लगा रहना चाहिए। चिंतन का विषय जीवन है, मृत्यु नहीं। मृत्यु का चिंतन करने से जीवनीशक्ति का ह्रास होता है, जिससे मृत्यु का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

भय स्थायी रूप से सूक्ष्म में बस जाया करता है। ऐसी भयपूर्ण स्थिति में कर्त्तव्यों का पालन यथाविधि नहीं हो पाता, जो स्वयं एक बड़ा दुःखद प्रसंग होता है। मनुष्य जब ठीक प्रकार से अपने कर्त्तव्यों में लगा रहता है, मृत्यु का भय उसके पास नहीं फटकने पाता। कर्त्तव्यों की आपूर्ति इस विचार के साथ मृत्यु का भय लाती है कि यह नहीं कर पाया, वह करने को रह गया है। सारा जीवन बेकार जा रहा है। यों ही दिन गुजर जाएँगे और एक दिन मृत्यु के मुख में चला जाना होगा। मनुष्य अपनी स्थिति के अनुसार अपने कर्त्तव्यों का पालन तत्परता से करता रहे, तो भी मृत्युभय उसे नहीं सताने पाए। फिर वह कर्त्तव्य छोटे हों अथवा बड़े, साधारण हों अथवा असाधारण, कर्त्तव्यहीन, अकर्मण्यता तो साक्षात मृत्यु ही कही गई है।

बहुत-से लोग अपनी बाद की स्थिति पर विचार करते-करते मृत्यु से भयभीत होने लगते हैं। मेरे बाद न जाने क्या होगा? मेरे मर जाने पर बीबी-बच्चे क्या करेंगे? कहाँ किसका आश्रय लेंगे? पता नहीं क्या-क्या कष्ट उठाने पड़ेंगे? इस प्रकार की कल्पनाएँ निरर्थक ही हैं। ऐसे लोग अपने को ही बीबी-बच्चों का विधाता समझते हैं। वे समझते हैं कि जब तक वे जिंदा हैं, बीबी-बच्चों के लिए स्वर्ग-संचय कर रहे हैं। उनके न रहने के बाद वे यातनापूर्ण नरक में गिर जाएँगे। मानों उन सबकी जीवन-गाड़ी उनकी जिंदगी से चल रही है, जिसके खतम होते ही सबका खेल खतम हो जाएगा। दूसरों के लिए अपने को सब कुछ समझना दंभ है। जब हम नहीं थे, संसार का सारा काम चल रहा था और जब नहीं रहेंगे, तब भी सब काम चलता रहेगा। संसार का कोई काम किसी के न रहने से रुकता नहीं। यह बात सही है कि हमारा जीवन आश्रितों के लिए आवश्यक है। किंतु इस आवश्यकता का यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने न रहने की कल्पना के साथ उत्तम जीवन छोड़कर कायरों की तरह मृत्युभय से रोते-कलपते रहें। अपने बाद की कल्पना के भयावह चित्र बनाने के बदले हमारी बुद्धिमानी इसी में है कि हम मरने के पूर्व ईमानदारी के साथ अपने आश्रितों की बेहतरी के लिए जो कुछ कर सकें, करें। ऐसा करने से ही अपने बाद की चिंता की सार्थकता है, केवल कल्पना करते रहना मूर्खता ही होगी। मृत्यु को भय का कारण बनाने की अपेक्षा उसे अपने कर्मों का सजग प्रहरी बनाकर चलने वाले सदाशयी व्यक्ति यशस्वी जीवन के अधिकारी बनते हैं।

मृत्यु उतनी भयानक नहीं, जितनी हम सोचते हैं

पुराने कपड़े उतारकर नए कपड़े पहनने में किसी को क्या कष्ट होता है? यह प्रश्न बड़ा हास्यास्पद लगता है। लगभग इसी तरह का प्रश्न मृत्यु के संबंध में पूछा जाए, तो उसका उत्तर गंभीरता से ही दिया जाता है। कारण कि लोगों की मान्यता है, मृत्यु एक दुःखदायी, कष्टप्रद और दारुण वेदना देने वाली प्रक्रिया है। मृत्यु कष्टप्रद और दुःखदायी प्रक्रिया लगती तो है, परंतु वास्तव में वह है नहीं। बचपन से किशोरावस्था में, कैशोर्य से यौवन में और यौवन से प्रौढ़-परिपक्व स्थिति में विकसित होने तक जो आनंद और उल्लास अनुभव होता है या कोई विशेष परिवर्तन होता दिखाई नहीं देता, इसलिए इस विकास की स्थिति में किसी को कष्ट अनुभव नहीं होता। मृत्यु इसलिए कष्टप्रद अनुभव होती या प्रतीत होती है कि मरने वाला व्यक्ति दारुण वेदना भोग रहा है कि उसके साथ ही ऐहिक जीवन का अंत हो जाता है और जिसके जीवन का अंत हो जाता है, वह लौटकर बता नहीं सकता कि उसे कैसा अनुभव हुआ?

मृत्यु के संबंध में अज्ञान ही मनुष्य को उसके प्रति तरह-तरह की धारणाओं को जन्म देता है, मृत्यु वास्तव में है क्या? यह घटना घटते

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समय लोगों को कैसा अनुभव होता है। वैज्ञानिकों के लिए यह भी शोध का एक विषय रहा है। इसके लिए कई वैज्ञानिकों ने उन व्यक्तियों के अनुभव एकत्रित किए हैं, जो मरने के बाद जीवित हो उठे या डॉक्टरों ने जिन्हें मृत घोषित कर दिया था, परंतु वास्तव में वे जीवित थे और पुनः स्वस्थ होकर सामान्य जीवनक्रम व्यतीत करने लगे।

इस तरह का अनुसंधान करने वालों में अमेरिकी वैज्ञानिक डॉ० कुवेलर रॉस का नाम अग्रणी है। उन्होंने तीन सौ से अधिक व्यक्तियों से भेंट की। ये सभी लोग ऐसे थे जो मरने के बाद पुनः जीवित हो उठे थे। इन व्यक्तियों ने अपने अनुभव जिस रूप में व्यक्त किए, उनसे सिद्ध होता है कि मृत्यु कोई दुःखदायी घटना नहीं है। मरने के पूर्व तक लगता अवश्य है कि कोई बहुत बड़ी यंत्रणादायी घटना घटने जा रही है, किंतु वास्तव में ऐसा कुछ नहीं होता। एक महिला ने जो अचानक बीमार पड़ गई थी और इसी बीमारी में वह मृत्यु तक पहुँच गई थी, अपना अनुभव बताते हुए कहा—"अचानक बीमार पड़ जाने के बाद मुझे लगने लगा कि मैं मरने ही वाली हूँ। अस्पताल में मेरे साथ जो मरीज थे, उनके सभी रोग मेरे ऊपर इकट्ठे हुए जा रहे हैं और मैं किसी की सहायता चाहती थी, जो मुझे इस मानसिक यंत्रणा से निकाल सके या इससे छुटकारा दिला सके। मैं सहायता के लिए किसी को पुकारना चाहती ही थी कि मुझे किसी का शांत, गंभीर और उत्साह बढ़ाने वाला स्वर सुनाई दिया, जो कह रहा था, साहस करो। आगे बढ़ो।"

"जैसे ही मैंने साहस बटोरा, मेरा सारा दरद दूर हो गया। तभी मेरे सामने एक प्रकाशपूर्ण आकृति आई। उसके साथ उसी जैसा आलोक लिए कमल का फूल दिखाई दिया। मुझे अनुभव हुआ कि मेरा साँस रोग और रोग की पीड़ा तिरोहित हो गए हैं। उस समय मुझे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी अपना पूरा शरीर प्रकाशपुंज-सा दिखाई दे रहा था कि मैं बहुत हलकी हो गई हूँ। उस समय बिस्तर पर पड़े अपने शरीर को मैं अच्छी तरह देख सकती थी। थोड़ी देर बाद मैं अपने शरीर में वापस आ गई। मेरी चेतना जब वापस लौटी, तो संबंधियों से मुझे ज्ञात हुआ कि चिकित्सकों ने मुझे मृत घोषित कर दिया था।''

एक और महिला ने मृत्यु का अनुभव इस प्रकार बताया—''बीमारी की हालत में अचानक मेरी हृदय गति रुक गई। तब मेरे चिकित्सक ने अपने सहयोगी डॉक्टर से कहा, डॉक्टर यह तो मर गई। मैं कहना चाहती थी कि मैं मरी नहीं हूँ, परंतु चाहकर भी मेरे होठ खुल नहीं रहे थे। डॉक्टरों ने आदेश दिया कि मेरे शव को अस्पताल के वार्ड से बाहर निकाला जाए। मैं यह सब देख और सुन रही थी, परंतु कुछ कह नहीं सकती थी।''

जिन लोगों की अचानक या किसी दुर्घटना में मृत्यु हो जाती है, उन्हें कैसा अनुभव होता है? इस संबंध में भी रोचक और दिलचस्प बातें जानने को मिलीं। एक व्यक्ति ने, जिसकी मृत्यु सिर में चोट लगने से हो गई थी तथा जो मरने के बाद पुनः जीवित हो उठा था, कहा—''थोड़ी देर के लिए मेरा सारा दरद दूर हो गया और मेरी पीड़ा पूरी तरह समाप्त हो गई। मैं बड़े ही सुख का अनुभव कर रहा था। अचानक एक झटका-सा लगा और मुझे अपने शरीर में कष्ट अनुभव होने लगा।'' एक महिला, जिसकी मृत्यु अत्यधिक रक्त-स्राव के कारण हो गई थी, ने पुनः जीवित होने के बाद बताया—''मैं अत्यंत मधुर और दिव्य संगीत सुन रही थी और मेरा सारा दुःख दूर हो गया था।''

कुछ लोगों को तो मृत्यु में इतना अधिक आनंद का अनुभव होता है कि उनके अनुसार जीवन में वे इतने अधिक आनंदित कभी

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं हुए। घटना लंदन की अलसगेट स्ट्रीट की है। वहाँ के एक मकान में आग लग गई और फायर ब्रिगेड के कर्मचारी आग बुझाने के काम में लगे। इन कर्मचारियों में जेम्स बर्टन नाम का एक कर्मचारी भी था। आग के बीच में घुसकर जब वह आग बुझाने का प्रयास कर रहा था, एक जलता हुआ शहतीर उसके ऊपर आ गिरा। वह आठ घंटे तक उस मलवे के नीचे दबा रहा। निकाले जाने के बाद लंबे समय तक चिकित्सा करने पर वह ठीक हुआ। उसने अपना अनुभव बताते हुए कहा, "एक क्षण के लिए मुझे अपनी पत्नी की याद अवश्य आई थी, लेकिन उसके बाद मैं किसी अज्ञात दिशा से आने वाली मधुर संगीत लहरियों को सुनते-सुनते जैसे खों-सा गया। मैं अपने शरीर को चाहकर भी हिला-डुला नहीं सकता था, लेकिन मैं सोच जरूर सकता था और अनुभव भी करता था। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था, जैसे कि फूलों की सेज पर सोया हुआ होऊँ तथा स्वर्ग में रह रहा हूँ।"

स्विट्जरलैंड के श्री हरमन काउंट एक बार सेंट बरनार्ड में बरफ के तूफान में भटक गए। खोज-बीन करने पर वे बेहोश अवस्था में मिले, जाँच करने पर उनमें जीवन का कोई चिह्न नहीं पाया गया, लगा कि उसकी मृत्यु हो गई है। बड़े प्रयत्नों के बाद जब वे ठीक हो सके, तो होश में आने पर उन्होंने बताया कि मार्ग की तलाश में भटकते हुए वे इतने थक गए थे कि आगे कदम नहीं बढ़ रहे थे। फिर भी जिजीविषा उन्हें आगे धकेले जा रही थी। इसी तरह आगे बढ़ते-बढ़ते वे एक स्थान पर थककर चूर होकर गिर गए, फिर उन्हें होश नहीं रहा कि क्या हुआ? लेकिन उस स्थिति में भी वे अपने आप को सचेत और संवेदन क्षमता से परिपूर्ण अनुभव कर रहे थे तथा उन्हें बेहद आनंद की अनुभूति हो रही थी। इस आनंदमय स्थिति से बाहर आते समय उन्हें अवश्य

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
कष्ट का अनुभव हुआ। डॉक्टरों के अनुसार वे बरफ में गिर जाने के काफी समय पूर्व मर चुके थे।

अर्नाल्ड सिग्रोट और उसके चार मित्रों ने जिनमें दो प्रेस रिपोर्टर थे तथा दो फोटोग्राफर, आल्पस पर्वत की चोटी पर चढ़ने का निश्चय किया। चोटी दो हजार फुट से अधिक ऊँची थी और उसके नीचे बहुत गहरा तथा सकरा खड्ड था। इस अभियान में अर्नाल्ड सिग्रोट सबसे आगे चल रहे थे। थक जाने पर थोड़ा सुस्ताने के लिए वे एक चोटी के किनारे बैठ गए, लेकिन दुर्भाग्यवश वह हिस्सा उनका वजन सह नहीं पाया और टूटकर गिर पड़ा, अर्नाल्ड भी उस टुकड़े के साथ नीचे लुढ़कने लगे।

जब उन्हें खड्ड से बाहर निकाला गया, तो वे अर्द्धमृतक की–सी स्थिति में थे। जीवन के कुछ ही चिह्न शेष थे, इसलिए उन्हें बचाने की भरसक चेष्टा की गई और उपचार सफल रहा। वे बच गए या कि मृत्यु के मुख में प्रवेश कर वापस लौट आए। चिकित्सा के उपरांत ठीक होने पर उन्होंने अपना रोमांचक अनुभव इन शब्दों में व्यक्त किया, ‘‘मेरा मस्तिष्क बड़ी तेजी से से काम कर रहा था। समय का मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं रह गया था और रह–रहकर मुझे अपने पत्नी–बच्चों का ख्याल आ रहा था। इसके बाद मुझे अपने शरीर का कोई आभास नहीं रहा। मैं उसे लुढ़कते, छिलते और उसमें से खून को रिसते हुए ऐसे ही अनुभव कर रहा था जैसे मैं किसी दूसरे व्यक्ति का शरीर लुढ़कता हुआ देख रहा हूँ।’’

मेरे साथी मुझे खोजते हुए आए। उनका अनुमान था कि मैं निश्चित रूप से मर चुका हूँ। उन्होंने मेरे शरीर को एक गरम बिछावन पर लिटा दिया। मैं धीरे–धीरे साँस ले रहा था। साँस लेना भी कुछ देर के बाद बंद हो गया और मेरे शरीर में जीवन का कोई

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

चिह्न शेष नहीं रहा, परंतु मैं होश में था और आनंद में था। मेरे एक परिचित डॉक्टर ने जीवन के प्रति निराशा व्यक्त की। मैं अपने परिवार के लोगों को रोते हुए देख रहा था। मैं चाहता था कि उन्हें बताऊँ, मैं कितना आनंदित हूँ और उनके चीखने-रोने से दुखी हो रहा हूँ। उन्हें चुप कराने और रोने से मना करने के लिए मैंने चीख-चीखकर कहना चाहा, किंतु मेरी आवाज शायद उनके कानों तक नहीं पहुँच पा रही थी। फिर मैंने सोचा कि में अपने इस शरीर में प्रवेश कर जाऊँ, तो ये लोग प्रसन्न होंगे। इतनी इच्छा करने मात्र से मैं वापस अपने शरीर में प्रविष्ट हो गया। हालांकि उस समय मुझे अपने शरीर पर लगी चोटों तथा आए घावों की पीड़ा अनुभव होने लगी थी, परंतु मैं प्रसन्न था कि अब वे लोग संतुष्ट हैं।

मरण के समय की अनुभूतियाँ

अब विज्ञान की एक नई शाखा विकसित हो रही है, जो मरणासन्न व्यक्तियों का अध्ययन करती है। इस विद्या में यह जानने का प्रयास करते हैं कि क्या इन व्यक्तियों को मृत्यु का भय होता है? निकटतम आ रही मृत्यु के बारे में बोध होने पर इन व्यक्त्यिों को कैसी अनुभूति होती है? मृत्यु संबंधी ऐसे तथ्यों का अध्ययन करने वाले इस विज्ञान को 'थेनेटॉलॉजी' कहते हैं। 'थेनेटॉस' (ग्रीक शब्द) का अर्थ है मृत्यु।

पश्चिमी जर्मनी के डॉक्टर लोथर विट्जल ने मरणासन्न मरीजों से उनकी मृत्यु के २४ घंटे पूर्व बात-चीत की। उन्होंने पाया कि जैसे-जैसे मृत्यु आती है, मरणासन्न व्यक्ति में उसका भय मिटता जाता है। बीमारी की वृद्धि के साथ-साथ ऐसे व्यक्तियों की धार्मिक आस्था दृढ़ होती चली जाती है और चिंताएँ कम होती जाती हैं।

'मैंसाचुसेट्स मेडीकल सोसाइटी' के बोस्टन निवासी डॉ० मूर रसेल मलेचर ने लगभग पच्चीस वर्षों तक गहन अन्वेषण करने के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पश्चात इन तथ्यों को 'ट्रीटीज ऑन सस्पेंडेड-ऐनीमेशन' नामक ग्रंथ में लिपिबद्ध किया है, जिसमें मरने के उपरांत फिर से जी उठे लोगों के अनुभव हैं। डॉ० फ्लैचर ने अपनी इसी पुस्तक में गार्नाइट शहर निवासी श्रीमती जान डी० ब्लेक के बयान के अनुसार लिखा है कि वे तीन दिन तक मृतावस्था में पड़ी रही थीं। डॉक्टरों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया, किंतु घरवालों ने शरीर गरम देखते हुए नहीं दफनाया। तीन दिन बाद वे जी उठीं। पूछने पर उन्होंने बताया कि वे ऐसे लोक में जा पहुँची थीं, जिसे सचमुच 'परीलोक' कहा जा सकता है। वहाँ बहुत-सी आत्माएँ उन्हें प्रत्यक्ष प्रसन्न उड़ती दिखाई दीं, जिनमें उनकी कुछ मृत सहेलियाँ भी थीं। ऐसे कई प्रसंग पिछले दिनों शोधकर्त्ताओं की जानकारी में आए हैं, जिनमें मरने के बाद जी उठने वाले व्यक्तियों ने अपनी सुखद-दुःखद अनुभूतियों को व्यक्त कर एक अदृश्य लोक पर पड़े परदे को उठाने में मदद की है।

दसवर्षीय बालिका डैजी ड्राइडन, जिसका वर्णन पुस्तक के प्रारंभ में किया गया था, की मृत्यु दस वर्ष की आयु में टाइफाइड के बिगड़ जाने के कारण हुई थी, मरने से दो-तीन दिन पूर्व उसे परलोक के दृश्य प्रत्यक्ष दीखने लगे थे। उसने जो बताया उसके आधार पर 'जीवन में उस पार' नाम से अनुभव प्रकाशित हुए हैं। इनको पढ़ने से पता चलता है कि अपनी इसी दुनिया की तरह एक-दूसरी दुनिया भी है। जिसमें मृतात्माएँ और देवात्माएँ उसी प्रकार निवास-निर्वाह करती हैं, जैसे कि अपने इस लोक के निवासी।

मृतक समझे गए रोगियों को पुनर्जीवित करने के लिए किए प्रयासों का विशिष्ट अध्ययन मनोविज्ञानी स्टेनिस्लाव ग्रोफ और जॉन-हेलिफाक्स ग्रोफ ने किया है। इन्होंने अपने शोध प्रकाशनों में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
ऐसे कई रोगियों का वर्णन किया है, जो मरकर जी उठे और मरण-क्षणों के मध्यवर्ती अनुभव बता सकने में समर्थ हुए। कैंसर से मरे डीन गिब्सन नामक एक रोगी ने पुनर्जीवित होने पर बताया कि पहले वह गहरे अंधकार में डूबा, इसके बाद उसे प्रकाश दिखा और फिल्म के परदे की तरह जीवन में किए गए भले-बुरे कामों की तसवीरें फिल्मी की तरह दिखाई पड़ीं। उसे लगा कि यह किसी न्यायाधीश का काम है, जो दंड-पुरस्कार देने से पहले यह दृश्य-झांकियाँ प्रस्तुत कर रहा है।

हृदय रोग से मृत एक महिला ने शोधकर्त्ता को बताया कि वह रूई के रेशों की तरह हलकी बनकर अस्पताल की छत तक उड़ी चली जा रही थी। डॉक्टर, नर्स आदि यथास्थान दिख रहे थे। दूसरी महिला को 'मृत्यु का क्षण' दुःखद प्रतीत नहीं हुआ, अपितु मृतक संबंधियों की समीपता, जो कि उसके स्वागत के लिए खड़े थे, सुखद ही लग रही थी। अधिकांश मृत व्यक्तियों को प्रकाश ज्योति के दर्शन हुए, जिसमें स्नेह और सहयोग का अनुदान झरते हुए अनुभव हुआ।

सत्य की शोध में चेतना के सिद्धांत का कम महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं है—इस निष्कर्ष पर पहुँचे सर आलिवर लॉज और क्रुप्स जैसे भौतिकीविदों ने इस तथ्य को मुक्तकंठ से स्वीकारा है। उनका मत है कि चेतना पदार्थों के संघात का प्रतिफल मात्र नहीं, अपितु उससे भिन्न स्वतंत्र है, जो शरीर के विनष्ट हो जाने पर भी विद्यमान रहती है। इस तथ्य के प्रमाण में उन्होंने कई मृतात्माओं का सहयोगपरक आह्वान किया, जिसके फलस्वरूप आत्माओं ने उसे स्वीकारा और उन्हें सहयोग भी प्रदान किया था। ('ऑन टॉकिंग') पुस्तक में कई प्रेतात्माओं के वैज्ञानिकों द्वारा टेप किए गए संदेशों का वर्णन है। इससे अदृश्य जगत के अस्तित्व की पुष्टि होती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मृत्यु के समय अलग-अलग लोगों को इस लोक में भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुभव होते हैं। इसका वर्णन करते हुए लेखक सीडेट्रन टॉमस ने अपनी पुस्तक 'इन दी डॉन बियॉण्ड लाइफ' में एक व्यक्ति के मृत्यु के समय के अनुभवों को इन शब्दों में व्यक्त किया है—"मेरा हृदय बैठा जा रहा था। दिन का प्रकाश समाप्त होता जा रहा था। एकदम अँधेरा छा गया। फिर वायुमंडल में कुछ उजाला दिखाई दिया। मेरे पिता, मेरे भाई तथा अनेक संबंधी, जो मुझसे पहले मर चुके थे, उनकी आवाजें साफ सुनाई दे रही थीं, वे मेरे पास ही उपस्थित थे।"

'फ्रंटियर्स ऑफ द आफ्टर लाइफ' के लेखक एडवर्ड सी० रेंडेल ने ऐसी ही एक दिवंगत आत्मा के अनुभवों को निम्न शब्दों में व्यक्त किया है—"मरने के बाद मैंने स्वयं को चारों ओर से स्वजन-संबंधियों से घिरा हुआ पाया। पहले पहल अपने आप को ऊपर उठते देखा फिर धीरे-धीरे नीचे आ गया। एक शरीर बिस्तर पर पड़ा था, तो दूसरा मैं खड़ा था। शारीरिक वेदनाएँ समाप्त हो गई थीं। जो-जो आत्माएँ मुझे लेने आई थीं, उन्होंने मुझसे चलने को कहा। उन्होंने मुझे आश्वस्त किया कि मैं मर चुका हूँ। संयोगवश मेरा पुनर्जीवन हुआ, लेकिन स्मृति उन क्षणों की भी रही।"

मूर्द्धन्य मनोविज्ञानी कार्लजुंग ने अपने निजी मरणोत्तर जीवन का रोचक वृत्तांत स्वलिखित 'मेमोरीज ऑफ ड्रीम्स रिफ्लेक्शन' में लिखा है। सन् १९४४ में उन्हें भयानक दिल का दौरा पड़ा। डॉक्टर उन्हें मरणासन्न स्थिति में अनुभव कर रहे थे और ऑक्सीजन के सहारे बचाने का प्रयत्न कर रहे थे। इसी समय जुंग ने अनुभव किया कि वे हजारों मील ऊपर उड़ गए और अधर में लटके हुए हैं। इतने हलके हैं कि किसी भी दिशा में इच्छानुसार जा सकते हैं। ऊपर से ही उन्होंने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

येरुशलम नगर का बाह्य नक्शा और भी बहुत सी चीजें देखीं। उन्हें लगा कि वे अब पहले की अपेक्षा बहुत बदल गए हैं। बहुत देर इसी स्थिति में रहने के बाद उन्हें अपने पुराने शरीर में पुनः लौटना पड़ा और शरीरगत जीवन पुनः प्रारंभ हो गया। जुंग ने लिखा है—"मरणोत्तर जीवन की इस अलौकिक अनुभूति ने मेरे समस्त संशय समाप्त कर दिए और यह समझा दिया कि मरने के बाद क्या होता है?"

'फ्रंटियर्स ऑफ द आफ्टर लाइफ' के लेखक एडवर्ड रेंडेल ने एक दुर्घटना में मरने के बाद पुनर्जीवित हो उठने वाले व्यक्ति के अनुभव संकलित करते हुए उसे इस प्रकार लिखा है—"मैं एक मूर्च्छा के बाद जागा। मैंने देखा कि मेरा शरीर अलग-थलग पड़ा हुआ है। भौचक्का-सा खड़ा होकर मैं देख रहा था और जब मैंने नीचे की ओर देखा, तो पाया कि मेरा शरीर लड़ाई में मारे गए और लोगों के साथ पड़ा हुआ है। मुझे लड़ाई की बात याद आ गई तथा यह भी याद आ गया कि मैं युद्ध में ही गोली लगने के कारण मारा गया हूँ। मैंने कब शरीर छोड़ा इसका मुझे जरा भी स्मरण नहीं था, परंतु मृत्यु मेरे लिए एक आनंददायक और पीड़ा रहित घटना थी।"

'सायकिकल फिनोमिना एंड द वार' पुस्तक के लेखक डॉ॰ हायर वार्ड केरिंगटन ने एक सिपाही का ऐसा अनुभव प्रकाशित किया है—"मैं अचानक अपने शरीर से बाहर फेंक दिया गया था। मैंने कोई पीड़ा अनुभव नहीं की।" अब तक संकलित विवरणों में जो मरने के बाद पुनर्जीवित हो उठे व्यक्तियों से पूछकर संकलित किए हैं, उससे यही सिद्ध होता है कि मृत्यु एक सामान्य घटना है, उतनी ही सामान्य जितना कि पुराने वस्त्र बदलना और नए पहनना। इसके संबंध में चिंता, भय और दुःख का एक ही कारण है—मृत्यु के संबंध में अज्ञान।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

'व्हेयर टू द वर्ल्डस् मीट' पुस्तक के लेखक जे० आर्थर फिंडले ने लिखा है—"मरणासन्न व्यक्ति को अपने पिछले जीवन की सारी घटनाएँ क्रमानुसार दिखाई देती हैं। यह सब तब होता है, जब वह शरीर छोड़ता है।" 'साइकिक ब्रिज' की लेखिका श्रीमती जेन लेरवुड ने भी इसी मत को दोहराते हुए लिखा है, "मृत्यु के समय तमाम जीवन की फिल्म विचारों की भीड़ की तरह भागकर जा रही होती हैं।" उल्लेखनीय है, इस पुस्तक की लेखिका ने मरणोपरांत प्रेत अवस्था में एक माध्यम से विवरण लिखवाया था।

अब तक इस संबंध में हुए अनुसंधान और शोध निष्कर्षों से यही प्रमाणित होता है कि मृत्यु के समय मनुष्य की वैसी ही मनःस्थिति रहती है जैसी कि उसके जीवनकाल में होती है। यों भी कहा जा सकता है कि जीवन भर के संस्कार, अनुभव, धारणाएँ तथा दृष्टिकोण मिलकर ही पारलौकिक शरीर का स्वरूप निर्धारण करते हैं? भगवान श्रीकृष्ण ने इस शाश्वत सत्य का उद्घाटन हजारों वर्ष पूर्व करते हुए कहा है—

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥
तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोर्बुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥

—भगवद्गीता८/६,७

हे कुंती पुत्र अर्जुन अंतिम समय जिस-जिस भाव का स्मरण करते हुए मनुष्य शरीर को छोड़ता है, सर्वदा उसी भाव के आश्रित होकर उसी भाव को प्राप्त करता है। इसीलिए सभी कालों में मुझे (ईश्वर को) ही मन और बुद्धि को अर्पित करो तभी तुम निस्संदेह मुझे प्राप्त होंगे। □

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मिशन की पत्रिकाएँ

(१) अखण्ड ज्योति (मासिक)

(धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का विज्ञान एवं तर्क-तथ्य-प्रमाण की कसौटी पर खरा चिंतन)

वार्षिक शुल्क-108.00, आजीवन शुल्क-2000.00 रुपया।

अखण्ड ज्योति अंग्रेजी (द्वि-मासिक)

वार्षिक शुल्क-78.00 रुपया

पता : अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा-281003

फोन : (0565) 2403940

(२) युग निर्माण योजना (मासिक)

(व्यक्ति, परिवार, समाज निर्माण एवं सात आंदोलनों की मार्गदर्शक पत्रिका)

वार्षिक शुल्क-54.00, आजीवन शुल्क-1000.00 रुपया।

युग शक्ति गायत्री (गुजराती मासिक)

(गायत्री महाविज्ञान, धर्म, अध्यात्म एवं युगानुकूल विचार परिवर्तन का मार्गदर्शन)

वार्षिक शुल्क-85.00, आजीवन शुल्क-1800.00 रुपया।

पता : युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-3

फोन : (0565) 2530128, 2530399

फैक्स : (0565) 2530200

(३) प्रज्ञा अभियान (पाक्षिक)

(युग निर्माण मिशन के क्रियाकलापों एवं मार्गदर्शन का समाचार-पत्र)

वार्षिक शुल्क-30.00 रुपया।

पाक्षिक वीडियो पत्रिका : युग प्रवाह

(युग निर्माण मिशन के प्रमुख क्रियाकलापों की दृश्य-श्रव्य जानकारी)

वार्षिक शुल्क-1500.00 रुपया।

पता : शांतिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तराखंड) फोन : 01334-260602

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

AV 49

19/-